उदारीकरण, आधुनिकीकरण, अतियंत्रीकरण और पश्चिमीकरण के इस 'कम्प्यूटर'—अवतार के युग मे जो भारत आज हमें दिया जा रहा है, उससे भी परे एक विशाल अछूता भारत—जहाँ प्रकृति और मनुजता आज भी सहजता जीती हैं, सहजता भोगती हैं, सहज सुख चाहती है, एकात्मभरा। उसी भारत के तीर्थयात्री है आदित्य जी।

विदेश मे—या कहूँ तो आत्मस्वीकृत बनवास मे—राम से अधिक समय बिताकर भी वे अपने गाँवो के भारत की स्मृति मे जीते रहे हैं। अतः उनकी इस संकलन की कहानियो मे आप उसी भारतीय आत्मा के दर्शन कर पायेंगे। जिस प्रकार 'मालगुडी' को अपने उपन्यासों के माध्यम से अंग्रेजी के भारतीय लेखक आर० के० नारायण ने विश्व के मानचित्र पर अंकित कर दिया है, उसी प्रकार भाई आदित्य ने विनयपूर्वक मध्य प्रदेश के छत्तीसगढ़ अंचल की संस्कृति का रेखाचित्र हिन्दी जगत के सामने प्रस्तुत किया है।

इसी के साथ-साथ उनका एक स्वप्न भी है, जो उन्होंने अपनी कहानी 'अभिनेत्री का पत्र' मे देखा है, दिखाया है। वह स्वप्न है, गरीब गाँवो से आए निर्धन ग्रामवासी युवक-युवतियो द्वारा आत्म-अवलम्बन के शस्त्र से सज्जित भुखमरी, बेरोजगारी और अभावों से संघर्ष करते हुए भारत का निर्माण।

और इन कहानियों के बीच आप पायेंगे—चमक-दमक से घिरी महानगरी मे प्रतिष्ठित, असख्य लोगो की ईर्ष्या का पात्र अभिनेत्री की त्रासदी भी, अपने सहज सुख के लिए दो क्षण पाने में असमर्थ है।

उदारीकरण,
पश्चिमीकरण के इस
आज हमे दिया जा र
भारत—जहाँ प्रकृति
हैं, सहजता भोगती हैं
उसी भारत के तीर्थय

विदेश मे—या
राम से अधिक समय
की स्मृति मे जीते र
कहानियो मे आप
पायेंगे। जिस प्रका
माध्यम से अंग्रेजी के
विश्व के मानचित्र
भाई आदित्य ने विन
की सस्कृति का रेखा
है।

इसी के साथ
अपनी कहानी 'अ
है। वह स्वप्न है,
युवक-युवतियो द्वा
भुखमरी, बेरोजगार
का निर्माण।

और इन क
दमक से घिरी महा
ईर्ष्या का पात्र अ
लिए दो क्षण पाने

आमंत्रों का पत्र

[illegible]नारायण शुक्ल 'विनय'

शब्द भारती

इलाहाबाद

उदारीकरण,
पश्चिमीकरण के इ
आज हमे दिया जा
भारत—जहाँ प्रकृ
हैं, सहजता भोगते
उसी भारत के ती

विदेश से—
राम से अधिक स
की स्मृति मे जीते
कहानियो मे अ
पायेंगे। जिस प्र
माध्यम से अंग्रेजी
विश्व के मानचि
भाई आदित्य ने
की संस्कृति का
है।

इसी के स
अपनी कहानी
है। वह स्वप्न है
युवक-युवतियो
भुखमरी, बेरोज
का निर्माण।

और इन
दमक से घिरी
ईर्ष्या का पात्र
लिए दो क्षण प

➢ प्रकाशक
शब्द भारती
८४ पुराना लूकरगंज
इलाहाबाद

➢ लेखक
आदित्यनारायण शुक्ल 'विनय'

➢ मूल्य 100-00

➢ संस्करण प्रथम 1999

➢ अक्षर संयोजन
ए०एस० लेजर प्वाइण्ट
२४ ए०डी०ए० व्यवसायिक केन्द्र
कटरा, इलाहाबाद
फोन ६०५७६५, ६१२०३६

➢ मुद्रक
भार्गव प्रेस
इलाहाबाद

भूमिका

एक अजीब से युग में रहने को शापित हैं हम। विज्ञान के इस बौद्धिक युग में निर्वाण को करते हैं लोग सामूहिक आत्म हत्याएं। सचार-यन्त्रों से आक्रान्त इस युग में सम्प्रेषण का सकट है आत्मीय सम्बन्धों में। विश्व भर का ज्ञान/समाचार जहाँ कम्प्यूटर/ टेलिविजन के माध्यम से हमारे कमरे में आता है और पड़ोसियों के प्रति हम पूर्णत उदासीन हैं अनभिज्ञ। दिल्ली की आवाज़ जहाँ तत्क्षण पहुँच जाती है वाशिंगटन, लन्दन, मास्को और पेरिस में, पर बीस किलोमीटर दूर बसा गाँव जहाँ रहता है उससे अनभिज्ञ और गाँव के नरक से दिल्ली। उदारीकरण, वैश्वीकरण, आधुनिकीकरण और निजीकरण जहाँ उपलब्ध कराते हैं एक वर्ग को लाखों रुपये मासिक की आय और महँगाई के माध्यम से गरीब को बनाती है और भी असहाय। दूरदर्शन पर होती है 'साहित्य में उत्तर-आधुनिकता' पर परिचर्चा और पहाड़ों में भटकती है मीलों एक किशोरी ईंधन की खोज में। नागर सभ्यता से ग्रस्त व्यक्ति भोगता है वैषम्य अलगाव, सम्बन्धों की अनिश्चितता, चिरन्तन साथ जिसके लिए बोझ है और तलाक 'रचनात्मक' कर्म। और कुली ढोता है जीवन का भार मात्र साँस लेने को।

और आदित्य जी जिस अमेरिका में रह रहे हैं- भोग रहे है आत्म-निर्वासन - वहाँ भारतीय मूलवश के और भी लेखक हैं - खडित और संदिग्ध व्यक्तित्व के। उनमे जो अंग्रेजी मे लिखते है, वे अपने को मानते हैं- भारतीय-अमरीकी। मात्र इसलिये कि वे भारत को, जो उनका भोगा हुआ कम, विक्रय की सामग्री अधिक है, अमरीकी मापदण्डों से तोलें और श्वेत अमरीकी उपभोक्ता को उसके मनोनुकूल बनाकर बेचें। भारत उनके लिए साधना का नहीं, साधनो को जुटाने का माध्यम रह गया है। बेचने को रचा जा रहा है एक कृत्रिम 'एक्ज़ोटिक' भारत - 'नवस्वतत्र' उद्दाम, जंगली युवक युवतियो द्वारा। उनके लिए भारतीयता भी अमरीकी साहित्य 'बार' में 'स्ट्रिप चीज़' का ही एक रूप है, जो नंगी होकर ही बहला सकती है उन रचनाकारो के श्वेत अमरीकी पाठको

उदारीकरण
पश्चिमीकरण के इ
आज हमें दिया जा
भारत—जहाँ प्रकृ
हैं, सहजता भोगत
उसी भारत के ती

विदेश मे—
राम से अधिक स
की स्मृति में जीते
कहानियों मे अ
पायेंगे। जिस
माध्यम से अंग्रेजी
विश्व के मानचि
भाई आदित्य ने
की संस्कृति का
है।

इसी के स
अपनी कहानी
है। वह स्वप्न
युवक-युवतियों
भुखमरी, बेरोज
का निर्माण।

और इन
दमक से घिरी
ईर्ष्या का पात्र
लिए दो क्षण।

ता मत

और दूसरा आप है मातृभाषा में [illegible] जिनमे से अधिकांश की रचनाओं में [illegible] पश्चिम की भौतिकता का आकर्षण [illegible] मिलाकर 'दिलासा' मुक्ति, [illegible] जुटाने की [illegible] यथार्थ है न भारत का, [illegible] परिधि का छूता हुआ एक [illegible])

ऐसे माहौल में, [illegible] मलयानिल के एक स्निग्ध, सुखद झोंके [illegible] है मानस-मन्दिर में भाई आदित्यनारायण शुक्ल 'विनय' की [illegible] उनमें न कृत्रिमता है, न आत्मग्लानि, न [illegible] संस्कृतिग्रस्त मालिन्य के अलंकरण। उनमें है [illegible] ग्रामीणा-सी सहजता, जो [illegible] गहनता भरी है। पावन सुरसरि की [illegible] आक्लांत पथिक की हरती है थकान। वे वैसी हैं, [illegible] जैसे कि उस क्षेत्र के आदिवासी वनचर, जिसको 'विनय' ने चुना है उनका केन्द्र-बिंदु।

'विनय' जो सचमुच विनम्रता की प्रतिमूर्ति है, [illegible] अहं-पूर्ण विनय की नहीं, अपनी कथाओं के लिए चुना है छत्तीसगढ़ का क्षेत्र। छत्तीसगढ़, जो शानी के 'शालवनों के द्वीप' है, मात्र [illegible] जाने को सुदूरवासी नागर पूँजीपतियों द्वारा, बनाने को [illegible] और भी साधनहीन। छत्तीसगढ़, जिसको विश्व के नाट्यमंच पर प्रस्तुत करते है हबीब तनवीर, उन आदिवासियों के नृत्य-नाटक में, जो [illegible] के बर्फ मे भी नंगे पैर चलना पसंद करते हैं। छत्तीसगढ़, जो खनिजों की खान है, मात्र बाहरी लोगों से लूटे जाने को, जहाँ [illegible] को पेटभर मजदूरी का अधिकार दिलाने का प्रयास करने में शहीद हो जाते हैं। शकर गुहा नियोगी और शासन उनके हत्यारों को जानते हुए पकड़ता नहीं। उस छत्तीसगढ़ के ग्रामीण अंचल की कथाएँ है ये।

'विनय' इस अंचल से पालित-पोषित हैं। वे उस अंचल को जीते रहे है, आज भी जी रहे है, उस प्रथम पावन प्रेम की तरह, जो अनायास उपज जाता है अनायास किसी की एक उँगली के छू जाने

में जब अनमना उठता है शरीर का रोम रोम, पर आजीवन आठों के लिए रहता है गूँगे का गुड़ जैसे जैसे समय बीतता है वह क्षण उस क्षण की स्मृति और भी गहन होकर आत्मा का मन का मानस का अभिन्न अंग बन जाती है। ये कथाएं ऐसे प्रेम की हैं, जिसे सड़कों पर प्रदर्शित नहीं किया जाता, वरन् जिसके सहज सुख के एक क्षण को भोगने के लिए की जाती है एक जीवन की तपस्या। फिर चाहे वह प्रेम किशोर अवस्था की एक निश्छल स्वप्नमयी चाह हो, जैसी कि उनकी कथा 'अन्तिम इच्छा' में है, या यौवन की विश्वासभरी उद्दाम भूल का परिणाम, जिसकी परिणति 'स्नेह सरिता' में हुई है। अव्यक्त रहते हुए भी यह प्रेम घुमड़ता रहता है 'मन का रिश्ता' बन भीतर ही भीतर परिपक्व बनने को। 'विनय' के किसी भी पात्र के लिए प्रेम साधना से प्राप्य अमोल निधि है, जो समाज की नींव को खोदने के लिए नहीं, उसकी प्राचीरों को सुदृढ़ करने के लिए है।

इस सन्दर्भ में ये कथाएं भारत की उस निश्छल आत्मा से जुड़ी हैं, जो युगों से दृग जिलाए हुए है। जहां 'समकालीनता', 'उत्तर आधुनिकता,' 'भोगे हुए यथार्थ', 'आम आदमी की त्रासदी' आदि शब्दों में लिखित नागर आलोचना संस्कृति का कोई अर्थ नहीं है। इन कथाओं में प्रतीक्षारत साधक चातक मन को मिलेगी स्वाति बूंद, शापित यक्ष आत्मा को वनवास का सुखद अन्त। यन्त्र-ग्रस्त युग में ये हैं हाड़-मांस के एक मानव का अवतार और सभ्यता के वन में भटकते श्रमित पथिक को है आस्था का सोपान।

बर्कली २३ मार्च १९९७

डॉ० वेदप्रकाश 'वटुक'
निर्देशक
फोकलोर इंस्टीट्यूट, बर्कले
कैलिफोर्निया, यू०एस०ए०

क्रम

- अंतिम इच्छा ५
- दो सत्य कथाएँ १६
- स्वर्ग में उर्वशी के संग एक दिन २१
- लहू ३०
- अभिनेत्री का पत्र ५७
- स्नेह-सरिता ६३
- मन का रिश्ता ८९

अंतिम इच्छा

उपाध्याय जी की डाक्टर साहब ने हर तरह से जाँच की। उनके पूर्व डाक्टरी-रिपोर्टों को भी उलटा पलटा। फिर वे उनके बड़े लड़के रामकुमार उपाध्याय को इशारे से बुलाकर बाहर ले गये। डाक्टर, रामकुमार से उनके पिता के स्वास्थ्य के संबंध में न जाने क्या-क्या उनसे कहते रहे फिर अपनी कार में बैठकर चले गये।

दूसरे दिन सुबह रामकुमार कचहरी जाने के पूर्व बीमार पिता की शैया के पास आ बैठे। आधा घंटा उनसे बातचीत करके वे कचहरी चले गये। बेटे की बातचीत से न जाने उपाध्याय जी को यह आभास हो गया कि अब वे साल छः महीने से ज्यादा के मेहमान नहीं हैं। या तो उन्हें कैंसर हो गया है या फिर ऐसी ही कोई जानलेवा बीमारी। यद्यपि रामकुमार ने पिता से यही कहा कि वे चाहें तो घर के किसी सदस्य के साथ कोई रमणीक स्थान पर घूम फिर आयें या उनके 'अमुक' प्रियजन को वे यहाँ कुछ दिनों के लिए बुलवा देते हैं। न हो तो 'अमुक' के साथ कुछ दिनों के लिए अमरकंटक प्रवास पर ही चले जायें। छत्तीसगढ़ के निकटस्थ तीर्थस्थलों और रमणीक स्थानों में उपाध्याय को अमरकंटक बड़ा ही प्रिय था। पर वे 'हाँ हूँ' कहकर टाल गये।

उपाध्याय जी के चार बेटों में रामकुमार सब से बड़े थे जो न केवल बिलासपुर के बल्कि छत्तीसगढ़ के नामी वकीलों में से एक थे।

लाख रुपये वार्षिक से ऊपर की उनकी प्रैक्टिस थी। शहर में अच्छी खासी कोठी बनवा रखी थी उन्होंने। मोटर-नौकर-चाकर सभी थे। उपाध्याय जी के दो लड़के अहमदाबाद और दिल्ली में थे। दोनों इंजीनियर। उनके सब से छोटे लड़के, हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर में फिजिक्स के प्रोफेसर थे।

अगले एक महीने के भीतर उपाध्याय जी के अन्य तीनों बेटे-बहू भी आकर उन्हें देख गये। अक्सर दीपावली की छुट्टी में ही उनके सभी बेटे सपरिवार बिलासपुर आते थे। उन सब का असमय यहाँ आना भी उपाध्याय जी ने ताड़ लिया था। सभी बेटे-बहुओं ने उन्हें अपने साथ

चलन का कहा पर [illegible]

[illegible] उपाध्याय [illegible] अपनी [illegible]
शेष दिन काट [illegible]
आभास हुआ था [illegible]
वे चाहते हुए भी [illegible]
एक दिन [illegible]कुमार [illegible]

"बाबू तुम से कुछ [illegible]

"बोलिये न बाबू जी" [illegible]

उपाध्याय जी कुछ [illegible]
अपनी राधिका मौसी से पूछ आना..

"क्या पूछ आऊँ...?"

"यही कि यदि वे मुझ अपने [illegible]
दिन उन्हीं के यहाँ गुजार [illegible]

सुनकर [illegible]
अपने पिता और राधिका मौसी के संबंध में कुछ [illegible]
तो अवश्य था किन्तु अपने माता-पिता के [illegible]
न था। तो आइये इस अफवाह की पृष्ठभूमि की [illegible]

मध्य प्रदेश के छत्तीसगढ़ अंचल में [illegible]
मे २५ किमी० की दूरी पर नवागाँव नामक [illegible]
उपाध्याय जी यहीं के रहने वाले [illegible]
पुरखौती खेती थी। उपाध्याय जी के पिता का [illegible]
में गौरहा परिवार से आना-जाना था। गौरहा [illegible]
की बेटी राधिका बड़ी सुंदर और सुशील थी। सो [illegible]
की शादी तय कर दी। शादी जबानी ही तय हुई थी, [illegible]
नही हुआ था। उपाध्याय अभी किशोर ही थे। [illegible]
एक दो बार अपनी भावी ससुराल हो आते। कभी रामलीला देखने
बीजापुर चले जाते तो भी वे अपनी ससुराल में ही [illegible]
बेलपान के मेले से लौटते समय भी वे वहाँ 'ब्रेक' ले लेते। हर बार
उनका उद्देश्य होता राधिका की एक झलक पा लेना।

उपाध्याय एक दिन तखतपुर बाजार से कुछ खरीददारी करके लौट
रहे थे। साइकिल पर पैडल मारते मारते अचानक उन्होंने पढ़ा

उदारी
पश्चिमीकरण
आज हमे दि
भारत—जहाँ
हैं, सहजता
उसी भारत
विदेश
राम से अधि
की स्मृति मे
कहानियो
पायेंगे। जि
माध्यम से अ
विश्व के म
भाई आदित्य
की संस्कृति
है।
इसी
अपनी कहा
है। वह स्व
युवक-युवति
भुखमरी, बे
का निर्माण
और
दमक से घि
ईर्ष्या का प
लिए दो क्ष

[illegible] 'शर्मा...' और उसने साइकिल का हैंडल बजाय नवापारा के बीजापुर की ओर मोड़ दिया। 'भार्गी सदन' पहुँचे तो राधिका ने ही घर का दरवाजा खोला। सामने १८-१९ वर्षीय एक सुंदर नवयुवक साइकिल लिए खड़ा था। राधिका लाज से गड़ गई पर उस दिन घर में कोई और न था सो उसे उपाध्याय का स्वागत करना ही पड़ा।

'आइये न' राधिका ने विनम्रता से कहा और उपाध्याय घर के भीतर आ गये। उन्हें पता लगा कि घर के सभी लोग एक पड़ोस के गाँव में शादी में गये हैं। आज पहली बार उपाध्याय ने राधिका को इतने नजदीक से देखा। राधिका ने अतिथि के लिए सुन्दर-स्वादिष्ट भोजन बनाया। पहली बार कोई चार-पाँच घंटे दोनों अकेले रहे। दोनों ने ही इस बीच यह अच्छी तरह से महसूस कर लिया कि एक दूसरे के लिए उनके मन में अथाह प्रेम का प्याला भर चुका है।

शाम ढलने से पहले जब उपाध्याय अपने गाँव जाने के लिए तैयार हो गये तो राधिका ने विनम्रता से कहा, "आज रात यहीं रुक जायें। घर के लोगों से भेंट हो जायेगी। सब दिन ढलने तक लौट आयेंगे।"

"फिर तो आता ही रहूँगा। मेरी माँ राह देख रही होगी।" और उपाध्याय चले गये। न जाने क्यों उपाध्याय के साइकिल लेकर निकलते ही राधिका की आँखों से दो आँसू लुढ़क पड़े।

विधि को कुछ और ही मंजूर था।

पड़ोस के गाँव राजपुर में जगमोहन तिवारी रहते थे। उनका एकमात्र लड़का रामचरण दो साल पहले ही किसी प्राइवेट आयुर्वेदिक कॉलेज से आयुर्वेदरत्न पास करके लौटा था। गाँव में ही उसने 'वैद्यकी' की प्रैक्टिस शुरू की थी जो अच्छी खासी चल निकली थी। खेती से दो सौ बोरे से ऊपर धान हो जाता था। जब तिवारी जी स्वयं अपने 'डाक्टर' और कमाऊ पुत्र के लिए राधिका का हाथ माँगने बीजापुर आये तो मझले गौरहा का मन न केवल डोल गया बल्कि बदल भी गया। सोचे- 'नवापारा वाले उपाध्याय के यहाँ क्या रखा है। लड़का हाईस्कूल भी तो पास नहीं है और फिर सारी जिंदगी बस खेती ही करेगा। मेरी बेटी तो राजपुर में ज्यादा सुखी रहेगी 'डाक्टरनी' बनकर।

अतत मँझले गौरहा ने राधिका का ब्याह राजपुर में ही वैद्य रामचरण तिवारी के लिए कर दिया।

मे तो लडकियाँ मूक गऊ होती हैं पता नहीं उन दोनो

दिला पर क्या बीती। पर बड़े गौरहा अपने छोटे भाई की इस ादा-खिलाफी में सख्त नाराज हुए। स्वयं माफी माँगने नवागांव गये और वृद्ध उपाध्याय के चरणों पर गिर पड़े। इतना ही नहीं, अपने अनुज के प्रायश्चित-स्वरूप बोले - ''पंडित जी यदि आप स्वीकार करें तो मैं अपनी बेटी आपको बहू के रूप मे देने के लिए तैयार हूँ।''

कहना न होगा कि वृद्ध उपाध्याय इसके लिए तैयार हो गये और बड़े गौरहा की बेटी कल्याणी को बेटे के लिए ब्याह लाये। कल्याणी अपनी चचेरी बहन राधिका से कोई साल भर बड़ी थी।

वक्त अपनी रौ मे चलता रहा। कालांतर मे वृद्ध उपाध्याय दिवंगत हो गये। युवक उपाध्याय चार पुत्रो के पिता बन गये। किन्तु पत्नी कल्याणी से कभी उनकी पटी नही। दरअसल कल्याणी 'गुणों' मे थी भी अपने नाम के ठीक विलोम। स्वभाव से ही कर्कशा, चिड़चिड़ी और ऊपर से शक्की। कम से कम उसने अपने पति उपाध्याय जी का तो कभी भी 'कल्याण' नहीं किया। पति पर बात-बात पर कुपित हो उठती, नागिन की तरह उन पर फुफकारती।

एक बार तो किसी बात पर क्रोध मे आकर कल्याणी ने उपाध्याय जी को इतने जोर से ढकेल दिया कि उनका सिर एक खंभे से आ टकराया और खून की तेज धार बह निकली थी। कल्याणी से उपाध्याय जी को मुक्ति तभी मिली जब वह उनके चौथे बेटे को जन्म देने के पाँच साल बाद दिवगत हो गई। अपने बीस साल के वैवाहिक जीवन मे उपाध्याय जी ने बीस दिन का भी पत्नी-सुख नहीं जाना। जब वे विधुर हुए तो ४१ वर्ष के थे। प्रौढ़ होने व चार पुत्रों के पिता होने के बावजूद भी १-२ जगह से उनके दूसरे विवाह के प्रस्ताव आये थे किन्तु उन्होंने मना कर दिया था। कहीं फिर कोई दूसरी कल्याणी 'कल्याण' करने न आ जाये, इस विचार से ही वे कॉप उठते थे। कल्याणी ने उन्हे कुछ दिया था तो चार गुणी पुत्र।

उधर राधिका ब्याह कर तो संपन्न घर मे आई थी। पति की अच्छी खासी वैद्यकी की प्रैक्टिस थी। गाँव में खेती बाड़ी अलग। पाँच साल की प्रैक्टिस मे ही रामचरण ने ५-७ एकड़ जमीन बढ़ा ली और एक नई मोटरसाइकिल भी खरीद ली थी। आस - पड़ोस के गाँवो मे वह मोटरसाइकिल से ही अपने मरीज देखने जाता था। किन्तु वह दुर्व्यसनी था। बीडी सिगरेट तो खैर वह पीता ही था अक्सर शराब पीकर

भी देर रात घर लौटता। नशे में कई बार राधिका को पीट भी देता। दुर्भाग्य से राधिका के कोई बाल-बच्चे भी न हुए। अपनी शादी के अठारहवें साल में वह विधवा भी हो गयी। उसका पति शराब के नशे में धुत पूरी रफ्तार से मोटरसाइकिल द्वारा बिलासपुर से लौट रहा था। तखतपुर की ओर से आती हुई ट्रक के साथ सँकरी भाँठा में उसकी भिड़न्त हो गई। रामचरण तो घटनास्थल पर ही मर गया। राधिका के सास-ससुर तो १०-१२ साल पहले ही गुजर गये थे।

राधिका जब विधवा हुई तो ३६ के आसपास थी। उपाध्याय जी रामचरण की मौत के समय ऋषिकेश, बद्रीनाथ आदि की यात्रा पर थे अतः वे साढ़ू की तेरहवीं में भी शामिल न हो सके थे। रामचरण की मौत के महीने भर बाद वे तीर्थयात्रा से लौटे। यह दुखद समाचार सुने तो राधिका से मिलने गये। राधिका के आँगन में खाट पर बैठ कर वे खूब फूट - फूट कर रोये। वे साढ़ू की मौत पर रो रहे थे या राधिका के दुर्भाग्य पर, कहना कठिन है। पास ही राधिका भी बैठे आँसू बहा रही थी।

दुखी राधिका अपने घर में अकेली ही रहने लगी। उपाध्याय जी तखतपुर बाजार आते-जाते कुछ समय के लिए राधिका के पास बैठ लेते। राजपुर रास्ते में ही पड़ता था। भाटो (जीजा जी) के आ जाने से राधिका का मन भी कुछ बहल जाता था। तब उपाध्याय जी की पत्नी कल्याणी जीवित थी। और जब भी उसे यह खबर मिलती कि उपाध्याय राधिका के यहाँ गये थे तो वह पति की 'खाल-खींच कर' रख देती थी। राधिका के दो वर्ष वैधव्य भोग लेने के बाद ही कल्याणी का भी देहान्त हो गया था। यह कहें कि उपाध्याय जी भी विधुर हो गये थे।

तो आज ६५ साल की उमर में उपाध्याय की 'अंतिम-इच्छा' यही कि वे अपने अंतिम दिनों में राधिका के पास जाकर ही रहें।

"लेकिन बाबू जी, आप राधिका मौसी के यहाँ क्यों रहना चाहते हैं? क्या आपको यहाँ कोई तकलीफ ..?"

"नहीं बेटा" उपाध्याय जी रामकुमार की बातों को काटते हुए बीच में ही बोल पड़े।

"मुझे यहाँ कोई तकलीफ नहीं है। तुमने और बहू ने मेरी सेवा-सुश्रुषा में कोई कमी नहीं उठा रखी है। लेकिन मैं चाहता हूँ कि अब अपने

अंतिम दिनों में मैं राधिका के पास ही रहूँ। इसीलिए मैं कह रहा था कि उनसे पूछ आते..."

उपाध्याय जी कुछ देर चुप रहकर फिर पुत्र से बोल पड़े, "बेटा, यह सच है कि मैं और राधिका एक-दूसरे को बहुत चाहते थे। शायद तुम्हें पता भी हो कि मेरा ब्याह पहले उन्हीं से तय भी हुआ था पर वह हो न सका। बेटे, हम आज भी एक-दूसरे को दिल से ही प्यार करते हैं लेकिन भगवान् शिव साक्षी हैं, मैं शिव जी की सौगन्ध खाकर कहता हूँ कि हम चरित्र से कभी गिरे नहीं। विश्वास करोगे बेटे, सच्चाई तो यह है कि मैंने और राधिका ने आज तक एक-दूसरे का स्पर्श भी नहीं किया है..."

कहते-कहते उपाध्याय जी का गला भर आया।

वे भगवान् शिव के परम भक्त थे। रामकुमार जानता था कि उसके पिता शिव जी की सौगंध खाकर कभी असत्य वचन नहीं कहेंगे।

दूसरे ही दिन वकील साहब पत्नी के साथ अपनी कार द्वारा रामपुर गये। जाकर राधिका मौसी को अपने पिता का हाल कह सुनाया। उनकी अंतिम इच्छा भी उन्हें बता दी। वैसे राधिका को उपाध्याय जी के स्वास्थ्य का समाचार किसी से मिल गया था। वो स्वयं उन्हें देखने जाना चाहती ही थी।

राधिका ने कहा, "जीजा जी यहाँ आकर रहना चाहते हैं यह तो मेरे लिए सौभाग्य की बात है।"

"लेकिन मौसी" रामकुमार बोल बड़े "लोग क्या कहेंगे?"

"अरे बेटा! लोगों को जितना कहना था वो तो कह चुके, आगे भी कह लेंगे। हमारे बारे में (यानी हम दोनों के बारे में) कुछ और कहना बाकी रह गया है क्या? न तो अब मुझे लोकलाज का डर है और न ही लोक परलोक का। तुम्हें तो अपने बाबू जी को साथ ही ले कर यहाँ आ जाना था। इसमें पूछने की क्या बात थी।"

अगले ही इतवार को वकील साहब अपने पिता को लेकर रामपुर गये। राधिका ने अपने घर में सब का स्वागत किया। चाय-नाश्ते के बाद रामकुमार पत्नी के साथ वापस बिलासपुर लौट गये। उन दोनों के जाने के बाद राधिका और उपाध्याय जी आँगन में बैठे हुए थे। साँझ ढल रही थी।

"अब आप का स्वास्थ्य कैसा है ओझा जी?" राधिका ने पूछा।

"मुझ से पूछ राधिका! मैं तो आज अपने गुनाहों की वेदी पर कदम धर, मुझे लगा जैसे मौत मुझे अपने मुँह से उगल कर कहीं दूर छोड़ गई है।"

"आइये, कुछ नहीं होगा ओझा जी! आप बिल्कुल ठीक हो जायेंगे।"

"अब मुझे जीने की ललक का कारण मिल गया है राधिका! सारी जिन्दगी भगवान से बस यही प्रार्थना करता रहा हूँ कि वे मुझे थोड़े दिनों के लिए ही सही राधिका के साथ रहने का सुख दे दें। प्रभु ने मेरी सुन ली। उन्होंने मुझे तुम्हारे पास पहुँचा ही दिया।" सुनकर राधिका मुस्करा दी।

ऊपर आसमान की ओर एक जोड़ा पक्षी अपनी मस्त उड़ान में उड़ा जा रहा था। उपाध्याय और राधिका की निगाहें पक्षियों पर पड़ीं। उन्हें लगा कि वे भी आज 'आजाद पंछी' हैं।

"कहिये ओझा जी, रसोई घर से आराम कुर्सी पर बैठियेगा। मैं भोजन बनाऊँगी। बताइये आज क्या खायेंगे?" राधिका ने उपाध्याय से पूछा।

"अरे राधिका, तुम तो मुझे जहर भी खिला दो तो मैं उसे भी बड़े प्रेम से खा लूँगा।" उपाध्याय बोल पड़े।

राधिका खिलखिलाकर हँस पड़ी। वह उठकर खड़ी हो गई। उसने पुनः उपाध्याय से रसोई घर में चलने को कहा। उपाध्याय जी को कुर्सी से उठने में कुछ तकलीफ हो रही थी। राधिका ने मुस्कराते हुए उनकी ओर अपना हाथ बढ़ा दिया "आइये।"



दो सत्यकथाएँ

यह सच्ची कहानी मैंने अपने दादा जी स्व० पं० [illegible] शुक्ल के मुँह से सुनी थी। उन्होंने स्वयं यह कथा अपने पिता (मेरे परपितामह) स्व० पं० जगेश्वर शुक्ल से सुनी थी।

घटना मेरे पूर्वजों के ग्राम तुलसी तहसील [illegible], जिला बिलासपुर, मध्य प्रदेश में घटी थी। सन् १८८० के अक्टूबर नवम्बर (दीवाली के आस-पास) की बात है। बनारस की एक रामलीला मंडली लीला खेलने ग्राम तुलसी आई हुई थी। लीला में २०-२५ सदस्य थे जो मेरे परपितामह श्री जगेश्वर शुक्ल के घर पर ही ठहरे हुए थे एक बड़े हालनुमा कमरे में। वहीं वे लोग अपना भोजन बनाते और रिहर्सल वगैरह करते थे। लीला मंडली के स्वामी और निर्देशक थे ४५-४६ वर्षीय पं० कृपाराम दुबे। मंडली में एक ३५-३६ वर्षीय फौजदार शर्मा नाम का आदमी था। वह पं० कृपाराम दुबे का सहायक व लीला मडली का भी सहायक निर्देशक था। रामलीला में प्रयुक्त तथा उपयोग मे लाये जाने वाले सभी सामग्रियों का भी फौजदार शर्मा ही प्रबंध करता था।

एक दिन रिहर्सल के दौरान कृपाराम और फौजदार, जो बेहद उग्र स्वभाव, मन का मैले और बदला भाँजने की प्रकृति वाले व्यक्ति थे, को कृपाराम ने जो खरी खोटी सुनाई उससे फौजदार ने अपना सार्वजनिक अपमान महसूस किया और अपने इस 'अपमान' का बदला लेने के लिए मन-ही-मन उसने एक योजना बनायी। फौजदार ने न केवल कृपाराम का बल्कि उसकी रामलीला के सभी मखौल उड़ाने की एक तरकीब सोच ली।

अगले दिन की बात है। उस रात लीला में राम द्वारा धनुष - भंग और फिर सीता - स्वयवर का दृश्य खेला जाना था। लीला में राम जिस शिव धनुष को तोड़ते थे उस धनुष का निर्माण और प्रबंध फौजदार ही करता था। वह इस धनुष का निर्माण करता था- एक अत्यंत लचीले बाँस (कमचिल) को मोड़कर तथा उस पर फैरा व फिर रंगीन कागज

[illegible] राम की भूमिका कर रहा १७ वर्षीय किशोर आसानी से वह शिव धनुष तोड़ सके। लेकिन आज तो वह कृपाराम और उसकी लीलामंडली का सार्वजनिक इन्सल्ट (अपमान) और उपहास कराना चाहता था। इसलिए उसने एक चाल चली जिसको उसने कानोंकान किसी को खबर न होने दी।

फौजदार ने अपने मेजबान अफसर शुक्ल से किसी काम का बहाना लेकर लोहे का एक छड़ (राड) मांग लिया। किसी एकान्त स्थान में जाकर उसने वह छड़ मोड़ा। फिर उसके ऊपर पत्ते व पेपर के ऊपर रंगीन कागज लपेट कर उसने शिव धनुष तैयार कर लिया। वह शिव धनुष उसने कहीं छिपाकर रख लिया। जब राम की लीला शुरू हुई तो फौजदार ने वही लोहे के राड से बना शिवधनुष चुपचाप ले जा कर टेबल पर रख दिया। पं० कृपाराम दुबे रंगमंच के बगल में ही हारमोनियम पर बैठे हुए थे और दृश्य के अनुरूप रामायण की चौपाई, दोहा, सोरठे गा-बजा रहे थे। फौजदार नेपथ्य में छिपा तमाशा देखने के लिए उत्सुक था।

समय आने पर विश्वामित्र की आज्ञा पाकर राम धनुष उठाने के लिए खड़े हुए। आगे बढ़ कर राम ने धनुष तो उठा लिया पर यह क्या!!! पहले की लीला में तो वह इतना कठोर या भारी नहीं हुआ करता था। फिर वह उसे मध्य से तोड़े कैसे? अभी कुछ देर पहले रावण तथा अन्य दिग्गजों का यहाँ जो अपमान हुआ था क्या वही राम का भी होने जा रहा है?

राम ने कातर नेत्रों से हारमोनियम बजा रहे कृपाराम की ओर देखा। राम से आँखे चार होते ही दुबे जी भी समझ गये कि दाल मे कुछ काला है और राम बड़े संकट में है। राम धनुष उठा चुके है। ऐसे समय में पर्दा गिराना भी बड़ा अशोभन होता। यानी कि राम की कमजोरी को ही पर्दे से ढाँकना। पं० कृपाराम दुबे ने सच्चे हृदय से भगवान् राम से प्रार्थना की-

"हे प्रभु आज लाज रख ले। कभी कृष्ण के रूप से तुमने द्रौपदी की लाज रखी थी। आज मेरी और तेरी लीला दोनों की लाज रख ले। आज तुम्हारी परीक्षा है भगवन्! यदि इस परीक्षा मे तुम असफल हो गये तो मनुष्य कैसे सफल हो सकता है? हे राम! लाज रख ले! रख ले! रख ले!......"

दुबे जी के साथ सम्मोहित पर [illegible]
राम के चरणों में लीन हो चुके थे [illegible]
मे ही निर्देश दिया- 'धनुष खैंचो...' और [illegible]
लगे-

लेत चढ़ावत खैंचत गाढ़े। [illegible]

तेहि छन राम मध्य धनु भागा। [illegible]

तभी रंगमंच पर बिजली कड़कने की [illegible]
ही क्षण राम के हाथों में शिवधनुष टूट [illegible]
मध्य चारो ओर करतल ध्वनि होने लगी और [illegible]
से लीलास्थल गूँज उठा। मानों आज [illegible]
भंग कर दिया हो। पं० कृपाराम का राम आज [illegible]
हो गया था।

दूसरे दिन पं० कृपाराम दुबे और [illegible]
एक-दूसरे के सामने फूट-फूट कर रो रहे थे। [illegible]
प्रभु राम की कृपा और महिमा का [illegible]
इसलिए रो रहे थे कि वे भी अनजाने में ही [illegible]
साथ पाप के भागीदार बने जिसका [illegible]
१९०५ तक) बना रहा। और अपने द्वारा 'राम' [illegible]
शुक्ल जी ने न जाने कितने ही नवधा रामायण व धार्मिक अनुष्ठान
किये। फौजदार को उस रात के बाद किसी ने कहीं [illegible]



यह सत्य घटना मैंने अपने गाँव नवापारा (गनियारी के पास [illegible]
खंड - तखतपुर, जिला - बिलासपुर, म०प्र०) के [illegible]
उपाध्याय जी के मुँह से सुनी थी। उपाध्याय जी ग्राम [illegible] में कृषि
कार्य के अलावा वहाँ तथा आसपास के गाँवों - [illegible],
बेलगहना, टाँडा आदि में पंडिताई भी करते थे।

मई सन् १९२५ की बात है। ग्राम [illegible] की [illegible] (जिसका
मायके संपन्न रहा होगा क्योंकि वह १०-१२ तोले सोने के गहने पहनी
हुई थी) अपने पति और अपनी सास के अत्याचारों से तंग आ चुकी
थी। उसने रोज़-रोज़ के इस दमघोंटू वातावरण में जिन्दगी जीने के बजाय
एक दिन सचमुच ही अपना दम घोंट लेना चाहा [illegible] करने के

[illegible] नदी जाने के बजाय [illegible] नामक एक आम्रकुंज में [illegible] आम के पेड़ की डाल पर वह फाँसी का फंदा [illegible] कई प्रयास किये पर उसे फंदा डालना नहीं आता था। [illegible] आम्रकुंज में ही दूर बैठा एक [illegible] चरवाहा बहू के पास आया।

'तुम यह क्या कर रही हो?' चरवाहे ने बहू से पूछा।

बहू ने अपना [illegible] उसे बता दिया। यही कि वह फाँसी लगा कर मरना चाहती है पर उसे फंदा डालना नहीं आ रहा है।

''क्या तुम मेरे लिए फाँसी का फंदा बना दोगे?'' बहू ने चरवाहे से पूछा।

''...मैं ?'' चरवाहा चौंका।

''कृपा करके बना दो ना। मेरे मरने के बाद मेरे सारे जेवर-गहने तुम ले लेना।'' बहू ने चरवाहे से कहा।

[illegible] लालच।

चरवाहे ने चारों ओर नजर दौड़ाई। जेठ का महीना था। उस लू चलती, तपती सुनसान दोपहर में उसकी बकरी के फैले गाय बैल, भैसों के अलावा वहाँ कोई अन्य प्राणी न था। अंततः चरवाहा लालच में आ ही गया। उसने बहू के हाथ से रस्सी ले ली और आम की डाल पर चढ़कर बहू को यह भी दिखा दिया कि उसे फंदा कैसे अपने गले में डालना है और किस तरह से झूल जाना है। अब बहू मरने के लिए आगे बढ़ी पर ठिठक कर खड़ी हो गई। अपने ही हाथों अपने प्राण लेना इतना आसान तो नहीं होता। उसे कुछ पीछे हटते देख चरवाहा ने उसे बढ़ावा दिया और फिर से एक बार फाँसी का 'रिहर्सल' दिखाने के लिए डाल पर चढ़ गया। चरवाहे ने बहू को फिर से दिखाया कि ''इस तरह से फंदा तुमको अपने गले में डालना है।'' चरवाहे ने फंदा अपने गले में डाल लिया। ''... और इस तरह से तुमको झूल जाना है '' पर यह क्या!!! चरवाहे का पैर डाल पर से फिसल गया (गत रात वर्षा हुई थी) और अगले ही क्षण चरवाहे की लाश अपने ही बनाये फाँसी के फंदे पर झूलने लगी। लाश की आँखें बुरी तरह से लटक गई थीं।

यह डरावना दृश्य देखकर वह चीख मारती हुई गाँव [illegible] की ओर भागी। वह चिल्लाती हुई भागी जा रही थी, [illegible] उपाध्याय जी आ रहे थे। वे अपने [illegible] के यहाँ [illegible] की कथा सम्पन्न कराने [illegible] गये हुए थे। [illegible] रोक कर पूछा 'बात क्या है? क्यों इस तरह [illegible] भागी जा रही हो?'

काफी देर बाद वह सामान्य हुई और [illegible] उपाध्याय जी को सब सुनाया। फिर उसने [illegible] लाश भी उन्हें दूर से दिखा दी। उपाध्याय जी धर्मप्राण व [illegible] पुरुष थे। उन्होंने अपने कथावाचक के कार्य को [illegible] वे बहू को सान्त्वना दे कर अपने घर अपने परिवार के साथ नवापारा ले गये। फिर उन्होंने गाँव के कोटवार को [illegible] दी। फिर बहू के ससुराल में भी। ग्राम [illegible] से बहू का ससुर व उसके पति दौड़े-दौड़े नवापारा आये। उन्होंने उपाध्याय जी के सामने ही 'बहू' के चरणों में गिरकर अपने दुर्व्यवहार के लिए क्षमा माँगी और उसे आदर के साथ अपने घर ले गये।

स्वर्ग में उर्वशी के संग एक दिन

हमारे शहर कानकार्ड के निकट के महानगर सन फ्रांसिस्को (कैलिफोर्निया, अमेरिका) में एक 'हरे कृष्ण' मंदिर है जहाँ सभी अमेरिकी नागरिक कृष्ण-भक्त-भक्तिन रहते हैं, उन सब के नाम भी कृष्ण-भक्ति शाखा के अनुसार ही होते हैं। भक्त सभी धोती-कुर्ते में व भक्तिन सभी बाकायदा साड़ी-ब्लाउज में रहती है। हरेक संध्या वहाँ 'हरे रामा हरे कृष्णा, कृष्णा कृष्णा हरे हरे' के स्वर में भजन गूंजते रहते हैं। यदा-कदा मैं वहाँ सभाहॉल में भजन या किसी कृष्ण-भक्त विद्वान् का व्याख्यान सुनने चला जाता हूँ।

उस सप्ताह वहाँ वर्जिनिया प्रान्त के कृष्ण मंदिर से एक विद्वान् कृष्ण भक्त आये हुए थे। मंदिर गया तो उनके व्याख्यान सुनने का सुअवसर भी मिला। अपने व्याख्यान के दौरान किसी प्रसंग पर उन्होंने एक रोचक व अविश्वसनीय सी घटना सुनायी उन्हीं के शब्दों में सुनें -

"कोई पांच वर्ष हुए मैं एटलांटा (जार्जिया प्रान्त) गया हुआ था। वहाँ मुझे दिल का दौरा पड़ा। मुझे अस्पताल पहुँचाया गया। किंतु मुझे बचाया न जा सका। डाक्टरों ने मुझे 'मृत' घोषित कर दिया। मेरा शव दो दिनों तक अस्पताल में ही सुरक्षित रूप से रखा गया व वर्जिनिया कृष्ण-टेंपल को सूचना दे दी गई कि वे आ कर मेरा शव ले जायं। मेरी मृत्यु होते ही यमदूत ने मुझे एक नया चोला (शरीर) दे दिया व अपने साथ एक बसनुमा वाहन में बैठा लिया। उस 'उड़नबस' में सौ एक यात्री पहले से ही बैठे हुए थे जिनकी आज ही किसी-न-किसी कारण से मृत्यु हुई थी। मेरे बाद यमदूत ने उस उड़नबस मे दस 'सवारी' और ली - अमेरिका के विभिन्न स्थानों से। फिर हम उस उड़नबस के द्वारा किसी अज्ञात लोक की ओर उड़ चले। अज्ञातलोक पहुँचने के बाद हमें उस वाहन से नीचे उतारा गया। वहाँ हमने देखा कि दो विशाल द्वार बने हुए हैं। एक द्वार स्वर्गलोक का था, दूसरा नर्क लोक का। दोनो द्वारों के मध्य में एक छोटा सा कार्यालय था। उस कार्यालय में जो अधिकारी थे उस हिंदूगण चित्रगुप्त के नाम से जानते हैं। हरे कृष्ण

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

मुझे लाने वाले यमदूत [illegible] "नहीं भाई पृथ्वी पर वापस जाओगे" [illegible] हाथ जोड़कर [illegible] और बोला "[illegible] मुझे पृथ्वी पर वापस न भेजें। वहाँ तो [illegible] और [illegible] महँगाई, बेरोजगारी, रिश्वतखोरी, [illegible] से भरी [illegible] हुई है, चाहे तो नर्क में ही मुझे भेज दें पर पृथ्वी [illegible]।"

"नहीं भाई! अपनी मृत्यु से पहले कोई स्वर्ग-नरक नहीं जा सकता। तुम्हें पृथ्वी पर वापस लौटना ही होगा। तुम्हें तो गलती से यमलोक में लाया गया है।"

"तो प्रभु यहाँ तक आ ही गया हूँ तो स्वर्ग का एक चक्कर ही मुझे लगा लेने दो। यदि यह भी सम्भव न हो, तो स्वर्ग-द्वार से उसकी एक झाँकी ही मुझे ले लेने दो।" यह कह कर मैंने चित्रगुप्त जी के चरण पकड़ लिये। "उठो भाई!" उन्होंने मुझे उठाया।

"अच्छा ठीक है" उन्होंने आगे कहा "आप यहाँ बैठें, मैं आपको किसी के साथ भेजता हूँ। फिर उन्होंने एक [illegible] से किसी से बातचीत की।

'उर्वशी जी, आप स्वयं ही आ जाएं। आपका एक काम करना चाहता हूँ' चित्रगुप्त फोन पर कह रहे थे। पृथ्वी के फोन की तरह वहाँ भी मैं केवल इधर की ही बात सुन सकता। पर फोन पर जो वार्तालाप हुआ उससे मैंने यह अनुमान लगा लिया कि किन्हीं उर्वशी जी को उन्होंने मुझे स्वर्ग की एक संक्षिप्त यात्रा करा देने के लिए निवेदन किया था और वे तैयार हो गये थे। बाद में तो मुझे उर्वशी जी के आने पर पता चला कि वह तैयार हो गयी थीं।

थोड़ी ही देर में उर्वशी जी एक फ्लाइंग कारनुमा वाहन से खुद ड्राइव करके वहाँ पहुँचीं। चित्रगुप्त जी ने उनसे मेरा औपचारिक परिचय दिया- 'उर्वशी जी ये वर्जीनिया, अमेरिका के कृष्ण कुमार हैं। इन्हें यमदूत गलती से पकड़ लाया है। इन्हें पृथ्वी पर वापस भेजना है किन्तु इनका निवेदन है कि वापस जाने से पहले स्वर्ग की थोड़ी सी सैर कर लें। इसीलिए आपको तकलीफ देनी पड़ी।' लगभग यही बात वे फोन पर पहले भी उनसे कह चुके थे। 'नहीं तकलीफ की कोई बात नहीं।' उर्वशी जी ने कहा। फिर वे मेरी ओर उन्मुख हुईं, ''आइए कृष्णकुमार जी।' अपने उड़नकार का एक डोर उन्होंने खोल दिया। मैं कुछ सकुचाता हुआ उनके वाहन में बैठ गया। उर्वशी जी स्वयं ड्राइविंग सीट पर बैठ गईं और वे मुझे ले उड़ीं। मैं उर्वशी जी के बगल में ही बैठा हुआ था। वे सुंदर सी साड़ी-ब्लाउज और हल्के मेकप में थीं उनकी देह से मानो इत्र की खुशबू आ रही थी। उतनी गोरी और सुंदर महिला मैंने पृथ्वी पर कहीं नहीं देखी थी। वे विदुषी तो लगती ही थी साथ ही बेहद विनम्र भी।

हम स्वर्ग के ऊपर-ऊपर उड रहे थे। स्वर्ग मे सभी के पास उड़नकारें हैं। हमारी अगल-बगल से हवा मे कई कारें इधर-उधर आ-जा रही थीं। ये उडनकारें जब चाहे स्वर्ग की धरती पर भी उतर आती हैं और वहां संगमर्मर की बनी पक्की सड़कों पर भी दौडने लगती हैं।

उर्वशी जी स्वर्ग के हर, प्रमुख व दर्शनीय स्थान के सामने अपनी 'फ्लाइंग कार' उतार लेतीं। पार्क करके मुझसे कहती - ''आइये यहाँ का 'कानन वन' देखें।'' ''आइये यहाँ की लायब्रेरी देखें'' ''आइये यहाँ का अमुक स्थान '' कोई चार घंटे वे मुझे स्वर्ग लोक की सैर कराती रहीं। और साथ ही बताती रही सृष्टि का इतिहास, स्वर्ग - नर्क के विधान। गीता के बहुचर्चित व सुप्रसिद्ध श्लोक 'कर्मण्येवाधिकारस्ते मा

फलेषु कदाचन की भी उन्होंने पुष्टि की। उर्वशी जी कहती जा रही थी और मैं मंत्रमुग्ध हो कर उनकी बातें सुन रहा था। "वास्तव में ईश्वर एक है जिसे पृथ्वी के विभिन्न धर्मों के लोग भगवान्, अल्लाह, गॉड ईसा मसीह, जीसस आदि विभिन्न नामों से जानते है।

स्वर्ग के लोग पृथ्वी के मनुष्यों की यह क्रियाकलाप देखकर बड़े ही क्षुब्ध और दुखी होते है कि वहाँ कोई मंदिर तोड़ रहा है तो कोई मस्जिद तो कोई चर्च। आखिर ये सब है तो ईश्वर के ही घर। सृष्टि की तुलना पृथ्वी पर बसे किसी देश की सरकार से की जा सकती है। जिस तरह से सरकार में राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री विभिन्न मंत्रीगण, सचिव व अन्य अधिकारीगण होते है ठीक उसी तरह से सृष्टि की सरकार में सर्वोच्च पद पर ईश्वर है। सरकार का काम सुचारु रूप से करने के लिए (सृष्टि संचालन के लिए) 'ईश्वर', 'अल्लाह' या 'गाड' के जो सहायक गण हैं उसे हिन्दू धर्म के लोग विभिन्न देवी-देवताओं के नाम से जानते है। जैसे- ब्रह्मा, विष्णु, शंकर, इन्द्र, कुबेर यमराज, लक्ष्मी, सरस्वती पार्वती, गायत्री इत्यादि।

फिर उर्वशी जी ने एक बहुत बड़ा रहस्योद्घाटन किया- "सृष्टि की सरकार और पृथ्वी के सरकार में अंतर केवल इतना है कि पृथ्वी (के देशो) की सरकार के पदाधिकारीगण जनता के द्वारा चुने जाते है अर्थात् सृष्टि के सरकार के पदाधिकारीगण (१) 'कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषुकदाचन व (२) पृथ्वी पर अपने द्वारा किये गये सुकर्मों व पुण्य प्रताप के अधार पर स्वयमेव इन पदों पर पहुँच जाते है। सृष्टि की सरकार के पदाधिकारी गण, स्वर्ग के निवासी, नरकवासी ये सभी कभी पृथ्वी पर मनुष्य के रूप में जन्मे थे। इन सब ने पृथ्वी पर मनुष्य के रूप मे जैसे-जैसे कर्म किये थे उसी के अनुसार परलोक आकर ये लोग अपना-अपना पद प्राप्त किये हुए हैं।"

"तो देवी जी क्या आप यह कहना चाहती है कि ब्रह्मा, विष्णु, शिव, इन्द्र, लक्ष्मी, सरस्वती, पार्वती आदि देवी देवता केवल पदों के नाम हैं और इन पदो को धारण करने वाले लोग भी कभी पृथ्वी पर मनुष्य थे?" मै पूछ उठा।

"आपने बिल्कुल ठीक समझा। मै बिल्कुल यही कहना चाहती हूँ' उर्वशी जी ने कहा।

तो क्या आप भी किसी उर्वशी नामक पद पर काम कर

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible] गया। [illegible]

[illegible] पुनर्मिलन [illegible] नहीं कर सकता। [illegible] कृपा [illegible]

अमेरिकी समय के अनुसार [illegible] अब मुझे 'भोर की भूख' सताने [illegible] घबड़ूत से मेरा फाटकैला करार किया [illegible] भी थी।

"आपको भूख लग आई होगी [illegible] कर लें।" [illegible] मैंने कहा। [illegible] लगाने के कमरे में [illegible] उनके इस निराले स्थान [illegible] उन्होंने बड़े ही ढंग से मुझे [illegible] खाना खिलाया। [illegible] अपमान करना मैंने [illegible] में न चूको। भोजन के बाद उन्होंने [illegible] घंटे विश्राम कर लें। फिर मैं [illegible]

मैं दो घंटे का बहुमूल्य समय व्यर्थ में विश्राम करके नहीं गंवाना

चाहता था सोचा कितना अच्छा होता यदि उर्वशी जी भी साथ ही रहें। सो मैंने उनसे निवेदन किया, 'देवी, इतने कम समय के लिए यहाँ आने का सौभाग्य मिल ही गया है तो इसे मैं विश्राम करके नष्ट नहीं करना चाहता। आपकी बड़ी कृपा होगी यदि सृष्टि का कुछ और रहस्य मुझे बतायें, मुझे कुछ और ज्ञान दें।'

सुनकर उर्वशी जी मुस्कुरा उठी।

"अच्छा ठीक है। आइये ड्राइंग रूम में बैठते हैं।" हम दोनों ड्राइंग रूम मे जा कर सोफो पर आमने-सामने बैठ गये।

"आपको जो पूछना हो पूछते जायें।" "उर्वशी जी ने कहा। वर्तमान समय मे जो इन्द्र के पद पर हैं क्या ये वही इन्द्र है जिन्होंने गौतम पत्नी अहिल्या के साथ छल से.."

"जी नहीं। उस इन्द्र को पद से हटा दिया गया था। पृथ्वी से मृत्यूपरांत आये एक अति सज्जन व पुण्यात्मा की नियुक्ति नये इन्द्र के पद पर की गई थी।" "देवी, कृपया यह बतायें कि वर्तमान समय में 'विष्णु भगवान्' के पद पर कौन काम कर रहे हैं?" "भारत के राष्ट्रपिता महात्मा गांधी" उर्वशी ने उत्तर दिया। "तब तो 'लक्ष्मी जी' का पद कस्तूरबा गाधी जी को मिला होगा।"

"सयोग से उन्हें ही मिला है। किंतु यह आवश्यक नहीं होता कि यदि पृथ्वी पर पति-पत्नी दोनो ने ही एक समान सुकर्म किये हैं एक समान पुण्य कमाये है तो वे परलोक या स्वर्ग आकर भी साथ-साथ रहे। लेकिन इत्तिफाक से कभी-कभी ऐसा हो भी जाता है।" फिर उर्वशी ने आगे बताया, "वैसे स्वर्ग या 'सृष्टि की सरकार' के लोग पति-पत्नी के सबंधो से परे होते है।"

"मै आपसे यह पूछना तो भूल ही गया कि भूतपूर्व इन्द्र का क्या हुआ।"

"किस भूतपूर्व इन्द्र की बात कर रहे है आप? क्योंकि अब तक तो कई इन्द्र हो चुके है। पृथ्वी की (देशो की) सरकार के पदाधिकारी गण जिस तरह से एक निश्चित समय के बाद अपना पद खाली कर देते हैं ठीक उसी तरह से सृष्टि की सरकार के पदाधिकारीगण भी एक निश्चित समयावधि के बाद अपना पद खाली कर देते हैं। यह समयावधि हर पद के लिए अलग-अलग है व हर (सृष्टि की सरकार का) पदाधिकारी भी पृथ्वी पर पुनर्जन्म लेकर अपना पद खाली कर देता है। खैर तो

[illegible]

"[illegible] इन्द्र के [illegible]" [illegible] के साथ [illegible] में।" "अच्छा [illegible] लगा कि आपने बताया उस इन्द्र को उसके पद से [illegible] 'शिव [illegible] परशुराम [illegible]' होने का शाप देकर [illegible] के लिए पृथ्वी पर भेज दिया गया है। आज भी वह [illegible] लोग अक्सर उनको [illegible] आते [illegible] इन्द्र था [illegible] के सामने। उसने अपने पद [illegible] बहुत लगाया था उसी निम्नस्तर का [illegible] दिल्ली के एक डाक्टर ने लगाया है। शायद आपने [illegible] न पढ़ा हो।"

"ऐसा [illegible] डाक्टर [illegible] अमेरिका में वह समाचार शायद न छपा हो।" "मैं उस डाक्टर का नाम नहीं लेना चाहूँगी। पर जो कुछ हुआ वह मैं आपको संक्षेप में बताती हूँ। प्रसव पीड़ा से तड़पती एक निर्धन महिला दिल्ली के एक प्राइवेट नर्सिंग होम में पहुँची। साथ में उसका पति भी था। [illegible] सरकारी अस्पताल ही [illegible] रहे थे किन्तु [illegible] स्थिति देखकर पति अपनी गर्भवती पत्नी को रास्ते में पड़े इस प्राइवेट नर्सिंग होम में ले गया। नर्सिंग होम के स्वामी डॉक्टर ने कहा कि पहले [illegible] नर्सिंग होम की फीस जमा करो। तभी यह महिला यहाँ प्रसूति के लिए भर्ती हो सकती है। निर्धन दम्पत्ति के पास पैसे तो थे नहीं। पति डाक्टर के चरणों पर गिरकर बहुत ही गिड़गिड़ाया और यह बोला कि वह नर्सिंग होम की फीस बाद में धीरे-धीरे चुका देगा किंतु डॉक्टर ने उसकी एक न सुनी। डाक्टर ने प्रसव पीड़ा में तड़पती महिला और उसके पति को अपने नर्सिंग होम से बाहर निकलवा दिया। अन्ततः उस बेचारी महिला को वहीं सड़क पर ही अपने बच्चे को जन्म देने के लिए बाध्य होना पड़ा।

ऐसी निर्दयता तो शायद डाकू भी नहीं करेंगे। वह तो डाक्टर था। बाद में डाक्टर को दिल्ली की अदालत ने पकड़कर सज़ा दे दी। किन्तु उस सज़ा से हम लोग सन्तुष्ट नहीं हैं। और हम सब उस डाक्टर के यहाँ परलोक आने का बड़ी ही बेसब्री से इंतजार कर रहे हैं। यहाँ नर्क में उसकी ऐसी दुर्गति बनायी जायगी कि वह बच्चू भी क्या याद रखेगा।"

"क्या उसे भी हिटलर की तरह स्थायी नर्कवास मिलेगा?" मैं पूछ बैठा। "वह हिटलर से क्या कम है यदि उस डाक्टर को अपने किये

पर कोई न होगा तो अवश्य ही उसे भी स्थायी नर्कवास मिल सकता है।" फिर उर्वशी जी ने आगे कहा, "क्या डाक्टरी का पेशा सिर्फ पैसा कमाने के लिए होता है? समाज सेवा का इसमें कोई स्थान नही? आप इतना पैसा कमा रहे हैं। एक दो जरूरतमंद गरीब मरीजों को यदि आप अपनी नि:शुल्क सेवा दे भी दें तो आप कौन से गरीब हो जायेंगे। सच्चाई तो यह है कि स्वयं ईश्वर उन गरीबों की फीस डाक्टर को किसी-न-किसी रूप में दे देते हैं।"

"आप बिल्कुल ठीक कहती हैं।" कुछ देर मौन रह कर मैंने पूछा 'अच्छा ये बतायें देवी, कि दुनिया में ऐसे कौन-कौन से पाप हैं कौन-कौन सी बड़ी गलतियाँ हैं जिनका कोई प्रायश्चित नहीं और नर्कवास भोगना ही पड़ता है?"

"दुनिया मे ऐसा कोई पाप नही, ऐसी कोई गलती नहीं जिसका प्रायश्चित न हो। बड़े-से-बड़े अपराध का भी प्रायश्चित है।" उर्वशी जी ने कहा।

"क्या?" मैंने पूछा।

"सच्चे हृदय से उस अपराध, गलती या पाप के लिए ईश्वर, परमात्मा, गाड, जीसस या गुरु नानक से क्षमा माँग लो। और फिर वही गलती पाप या अपराध अपने जीवन में कभी दुबारा न करो। इससे बड़ा और सुदर प्रायश्चित दुनिया मे और कुछ भी नहीं है। केवल इसी से ही नर्कवास से बचा जा सकता है। प्रभु बड़े ही दयालु हैं। मनुष्य जब भी सच्चे हृदय से उनसे क्षमा माँगता है, वे प्रदान कर देते हैं। उनकी शर्त केवल यही होती है कि अब वही गलती तुम कभी दुबारा न करना। आप तो 'हरे कृष्ण' संप्रदाय के हैं, आपको तो मालूम ही होगा कि भगवान् कृष्ण ने शिशुपाल को लगातार उसके कितने जघन्य अपराधों के लिए क्षमा किया था।

"देवी, ईश्वर को प्रसन्न करने और मनवाञ्छित फल प्राप्त करने का मार्ग क्या है?'

"प्रार्थना। ईश्वर की प्रार्थना से बढ़कर कोई तपस्या नही। यह आवश्यक भी नही कि आप यह प्रार्थना प्रतिदिन नहा धो कर किसी पवित्र स्थान पर बैठ कर करें। आप प्रभु की प्रार्थना चलते-फिरते, लेटे, सोते, जागते, सफर करते किसी भी स्थिति मे कर सकते हैं।"

लेकिन लोगों की आम शिकायत है कि प्रभु प्रार्थना सुनते नहीं

[illegible] महात्मा गांधी स्वर्ग में [illegible] सृष्टि की सरकार में भी महत्त्वपूर्ण पद [illegible] 'इमर्जेंसी' के पुण्य के बल [illegible] 'शुभ-कामना' की [illegible] कर सकते रहे। [illegible]''

'अच्छा' मैंने कहा 'क्या अमेरिका से भी कोई महापुरुष सृष्टि की सरकार में ऐसा महत्त्वपूर्ण पद पा सका है?'

[illegible] विष्णु भगवान के पद [illegible] फ्रांस की एक बड़ी पुण्यात्मा महिला [illegible] के पद पर आसीन थी।

[illegible]''

[illegible] पुनर्जन्म हो गया है।

[illegible] कि उर्वशी के फोन के [illegible] उन्होंने फोन उठा लिया- [illegible]

''जी हाँ, मैं उर्वशी बोल रही हूँ। जी हाँ, ठीक है। बस मैं उन्हें साथ लिवा कर ले आती हूँ।''

'लीजिए आपका बुलावा आ गया। चित्रगुप्त जी का फोन था।'' उर्वशी जी ने फोन रखते हुए मुझसे कहा। फिर वे चाय बनाकर मुझे पिलायीं। चाय के बाद अपने फ्लाइंग-कार से ही वे मुझे चित्रगुप्त जी के दफ्तर में छोड़ आईं। मैंने उर्वशी जी से विदा लेकर उन्हें सादर प्रणाम किया। प्रत्युत्तर में वे भी दोनों हाथ जोड़कर मुस्करायीं।

यमदूत मुझे पृथ्वी पर लौटा लाया। एटलांटा जार्जिया, अमेरिका के जिस अस्पताल में मेरा मृत शरीर पड़ा हुआ था उसमें पुन मेरे प्राणों का संचार करके यमदूत लौट गया। मैं जीवित हो कर उठ बैठा। दूसरे दिन सारे अमेरिकी समाचार-पत्रों में मैं-ही-मैं छपा हुआ था। प्राय: सभी समाचार-पत्रों में एक से ही शीर्षक थे- 'जार्जिया के मृत कृष्णकुमार पुनर्जीवित'।

□□□

लहू

उस आलीशान दुमंजिले भवन के माथे पर उसका नाम भी लिखा हुआ था - रश्मि भवन। यह सुंदर बंगला मध्य प्रदेश के छत्तीसगढ़ अंचल के बिलासपुर शहर के विद्यानगर कालोनी में स्थित था। इस भवन के स्वामी थे शहर के जाने-माने रईस, उद्योगपति संजीव शर्मा जो न केवल दौलत के बल पर अमीर कहलाते थे बल्कि वे दिल के अमीर के नाम से भी जाने जाते थे। संजीव शर्मा की पत्नी का नाम रश्मि था। निस्सन्देह उन्होंने अपने 'राजप्रासाद' का नामकरण अपनी जीवनसंगिनी के नाम पर ही किया हुआ था। पचीस वर्ष की आयु में ही संजीव बाबू ने वस्त्र - उद्योग के क्षेत्र में जो असाधारण सफलता प्राप्त की थी वह निश्चय ही प्रशंसा के योग्य थी। आज से कुछ वर्ष पूर्व अपनी पत्नी के साथ जब वे इस शहर में आये तो वे एक मध्यम वर्ग के आदमी थे। वे यहाँ इन्दौर से कपड़ा - मिल की नौकरी छोड़ कर आये थे। बिलासपुर आकर उन्होंने मध्य प्रदेश वित्त निगम' से ऋण लिया और यहाँ शिवरीनारायण मार्ग पर स्वयं की एक छोटी सी फैक्ट्री खोली - चादर बनाने की। व्यवसाय का पूर्व अनुभव तो उन्हें था ही, साथ ही एक अच्छे प्रबंधक के भी उनमें गुण थे। कठोर परिश्रमी तो थे ही। भाग्य ने भी उनका साथ दिया। उनका कारखाना चल निकला। उनके मिल मे धीरे - धीरे सभी तरह के कपड़े बनने लगे थे - चादरें, साडियाँ, शर्ट, सूट, टावेल्स आदि। उन्होंने अपने वस्त्र उद्योग का भी नाम 'रश्मि - टेक्सटाइल्स' रख लिया था। रश्मि - टेक्सटाइल्स के कपड़े विदेश भी जाने लगे थे। इसी वजह से संजीव का अंतर्राष्ट्रीय दौरा भी शुरू हो गया था।

आज भी संजीव को एक इंटरनेशनल फ्लाइट से कहीं विदेश चले जाना था किंतु अपनी पत्नी रश्मि के 'स्वास्थ्य' की वजह से उन्होंने अपनी फ्लाइट पोस्टपोन कर दी थी। रश्मि की आज दूसरी बार जचकी होने वाली थी।

सुबह के दस बजते होंगे। लेडी डाक्टर को घर पर ही बुलवा लिया गया था। संजीव गाउन पहने. अपने मुँह मे पाइप दबाये प्रसव हो रहे

[illegible] गाने की आवाज [illegible] [illegible] निकली।

[illegible] ने उन्हें खुशखबरी सुनाई।

[illegible] लिए, कुछ [illegible] कानों में [illegible] के रोने की आवाज आ रही थी।

"कौन रो रहा है बाबू जी?" राजीव ने पूछा "तुम्हारा छोटा भाई हुआ है यह उसी की आवाज है। आओ उससे मिलते हैं।" यह कहते हुए संजीव राजीव का हाथ पकड़ प्रसव कक्ष में पहुँच गये। वहाँ रश्मि के बगल में बिस्तर पर नवजात शिशु पड़ा हुआ था जो रह - रह कर अपनी उपस्थिति का आभास दे रहा था। पति - पत्नी ने एक - दूसरे को बधाई दी और दोनों ही हँस पड़े। संजीव जच्चा - बच्चा के बिस्तर के निकट ही एक कुर्सी खींचकर बैठ गये और अपने नवजात पुत्र को प्यार से देखने लगे। फिर उसे धीरे-धीरे गोद में उठाने लगे। पास ही खड़ा राजीव जिज्ञासापूर्ण नज़रों से नन्हे शिशु की ओर देख रहा था।

"बाबू जी, छोटा भाई मुझे भी दिखाओ न" यह कहता हुआ राजीव शिशु को अपनी ओर खींचने लगा। उसकी यह क्रिया देख रश्मि ने राजीव को झिड़क दिया

"राजू ये क्या पागलपन है? देखते नहीं, ये कितना छोटा है।"

माँ की बात सुनकर राजीव सहम कर तनिक परे हट गया। पर निकट ही खड़े हो कर शिशु की ओर टुकुर-टुकुर निहार रहा था। उसकी आँखों में जिज्ञासा के भाव थे और शायद मन में छोटे भाई को हाथ में लेकर प्यार करने की प्रबल इच्छा। संजीव बच्चे की इस इच्छा को भाँप गये और उसे शिशु - स्पर्श करा दिया।

"बाबू जी, छोटा भाई कहाँ से आया?" बच्चे ने एक जिज्ञासापूर्ण प्रश्न किया।

"बेटे, जहाँ से तुम आये।" संजीव ने तनिक सम्हलते हुए उत्तर दिया।

"बाबू जी ने कक्षा म आया? नन्हे राजीव ने [illegible] उन पर दाग दिया।

"बेटे, बच्चे माँ के पेट में रहते हैं। नौ - दस माह वहाँ रहने के बाद बाहर आ जाते हैं। अपनी माँ और बाबू जी के पास।" संजीव ने बच्चे की जिज्ञासा शांत करने का प्रयास किया।



शर्मा-दम्पत्ति का नवपुत्र समीर आज एक वर्ष का हो गया था। आज उसका 'बर्थ डे' बड़े ही उल्लास एवं धूमधाम के साथ मनाया गया। सैकडो लोग बच्चे के जन्म-दिन की पार्टी में शरीक होने आये, तरह-तरह के खिलौने और रंग-बिरंगे कपड़े समीर के लिए लोग ले कर आये थे। आज उसे प्यार से गोद में उठाने, चूमने और पुचकारते अतिथिगण अपना सारा प्यार समीर पर ही उंडेल रहे थे। पाँच वर्षीय राजीव अकेले एक कोने में खड़ा अपने छोटे भाई की खातिरदारी देख रहा था। तभी संजीव की नजर उस पर पड़ी। वह उसके पास जा खड़े हुए। उसके सिर पर प्यार से हाथ फेर कर कहा-

"राजू बेटे - आओ! अपने छोटे भाई को उसके 'बर्थ डे' पर बधाई दो। चलो उससे कहो हैप्पी बर्थ डे टू यू।"

"बाबू जी मेरा बर्थ डे कब आयेगा?"

सजीव ने बच्चे की मन स्थिति भाँप ली। उन्होंने कहा - "बेटे बीस अक्टूबर को तुम्हारा भी बर्थ डे है।"

"बाबू जी क्या मेरे 'बर्थ डे' पर भी इतने सारे मेहमान आयेंगे? क्या मेरे लिये भी सब लोग खिलौने और कपडे लायेंगे?"

"हाँ बेटे, तुम्हारे बर्थ डे पर भी ये सब लोग आयेंगे। तुम्हारे लिये भी खूब सारी टाफियाँ, खिलौने और नये-नये कपडे सब लोग ले कर आयेंगे।"

बाबू जी की बातो से राजीव को संतोष हुआ। सजीव उसे गोद मे उठाकर उसकी माँ और समीर के निकट ले गये। राजीव ने अपने छोटे भाई का चुंबन ले लिया।

राजीव घर के पास ही एक प्राथमिक शाला मे कक्षा दूसरी में पढ़ रहा था। उसके क्लास के ब्लैकबोर्ड मे उसके शिक्षक हर रोज कोने मे तारीख डाल दिया करते थे। एक दिन शिक्षक ने ब्लैकबोर्ड म उन्नीस

अल्बर्ट का [illegible] [illegible] राजीव ने अपने [illegible] से पूछा - "[illegible] [illegible] अल्बर्ट [illegible]?"

"हाँ, [illegible] [illegible] [illegible]" [illegible] ने पूछा।

"[illegible] [illegible] जन्म दिन है।"

"[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] राजीव।"

"थैंक यू पापा जी"

कुमार [illegible] [illegible] राजीव ने [illegible] माँ के पास जा कर कहा -

"माँ आज मेरा 'बर्थ डे' है न, मेरा जन्म दिन नहीं मनाओगी?"

माँ से कोई उत्तर न पाकर उसने पुनः कहा-

"बाबू जी ने कहा था कि वह अल्बर्ट की तरह मेरा 'बर्थ डे' मनायेंगे।"

"तो फिर अपने बाबू जी से ही [illegible] करो।"

रश्मि ने कहा,

"बाबू जी तो दिल्ली गये हुए हैं।"

"तो मैं क्या करूँ?"

रश्मि से यह अप्रत्याशित उत्तर सुनकर राजीव मायूस हो उठा।

रश्मि-भवन के निकट ही एक चर्च था। उस चर्च के फादर अक्सर शर्मा परिवार के यहाँ आने-जाने रहते थे। फादर को भोले-भाले राजीव से बड़ा लगाव था। संध्या समय राजीव चर्च के लान में फादर के साथ बैठा हुआ उनसे बातें कर रहा था।

"फादर, माँ मेरा 'बर्थ डे' क्यों नहीं मनाती। आज मेरा 'बर्थ डे' है।"

"अरे सच राजू। हैप्पी बर्थ डे टू यू।"

"थैंक यू फादर।" थोड़ी देर रुक कर राजीव ने फिर पूछा - "बताइये न फादर' माँ मेरा 'बर्थ डे' क्यों नहीं मनाती?"

"क्या माँ ने तुम्हारा 'बर्थ डे' नहीं मनाया आज?" फादर ने पूछा।

"नहीं फादर।" राजू ने दुखी स्वर में कहा। "कोई बात नहीं राजू। शायद उन्होंने सोचा होगा कि तुम्हारे बाबू जी तो आज घर पर है नहीं। हो सकता है उनके आ जाने पर मनायें।" फिर फादर ने बात

का विषय वर्णन की गरज से नहीं ... अक्सर राजू अब ये बनाते कि परसों मैंने तुम्हें जो कहानी सुनाई थी वह तुम्हें याद है या नहीं।"

"हाँ फादर, वह कहानी मुझे याद है।"

"अच्छा तो फिर वह कहानी मुझे सुनाओ।"

और राजीव वह कहानी फादर को सुनाने लगा। फादर राजीव को अक्सर ही कहानियाँ सुनाया करते। फिर अपनी बनाई हुई कहानी ने वे स्वयं राजीव के मुख से सुनते। इससे उन्हें बड़ा आनन्द आता। फादर राजीव को अक्सर ही ऐसी कहानियाँ सुनाते जिसमें माँ के प्रति एक सेवक और आज्ञाकारी पुत्र का चरित्र चित्रण होता। राजीव के कोमल मन पर इन कहानियों की गहरी पैठ लगती। शायद फादर की कहानियों का ही यह प्रभाव था कि माँ के उपेक्षित व्यवहार के बावजूद भी राजीव माँ के प्रति मन में सम्मान और सेवा की भावना रखता था।



बाल्यकाल के अनेक कड़वे - मीठे घूँटों को पीता हुआ राजीव अब वयस्क हो चुका था। अब वह अट्ठाइस वर्ष का एक सुदर्शन युवक था। गणित में द्वितीय श्रेणी में एम०एस-सी० पास करने के बाद वह अब सजीव बाबू के व्यवसाय में हाथ बँटाने लगा था। उसका छोटा भाई समीर मेडिकल स्नातक होकर चर्च के फादर के जरिये बिलासपुर के ही मिशन हास्पिटल में डाक्टर हो गया था।

राजीव को बचपन से ही कुछ इस तरह का व्यवहार एवं वातावरण मिला कि वह एक अत्यंत गंभीर एवं शांत प्रकृति का युवक बन गया था। उसने कालेज के दिनों में भी अन्य उच्छृंखल युवकों की तरह किसी बेतुके और जोशीले कार्यों में कभी भाग नहीं लिया। हाँ, उसे खेलों में अवश्य ही रुचि रही। विशेषकर क्रिकेट का वह प्रेमी था। वह स्वयं एक अच्छा आलराउंडर था। अपने कालेज के अंतिम वर्ष में वह अपनी युनिवर्सिटी टीम का कप्तान भी रहा।

राजीव उन दिनों काफी लोकप्रिय हो गया था। जब उसने घाँसीदास विश्वविद्यालय, बिलासपुर की टीम को रविशंकर विश्वविद्यालय, रायपुर की टीम से न केवल हारने से बचा लिया था वरन् स्वयं शानदार शतक बनाकर अपनी टीम को विजय भी दिलाई थी।

मैन आफ द मैच का पुरस्कार लेकर जब वह उत्साहित मन से

[illegible] वह [illegible] में खुशी से कर मिला [illegible]

[illegible] और फिर राजीव चुपचाप [illegible] की गंभीर अवश्य ही [illegible]

[illegible] भैया तुमने तो कमाल ही कर दिया [illegible] अखबार में तुम्हारा फोटो होगा और [illegible]

राजीव ने [illegible] उसकी बधाई और [illegible]

राजीव [illegible] में बैठा अखबार देख रहा था [illegible] आया। थोड़ी दूर पर [illegible] राजीव के पास भेजा।

[illegible] राजीव का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट करने का [illegible] राजीव ने अखबार से अपनी नजर [illegible] कर लड़की की ओर देखा।

"जी हाँ।"

"बोलिये।"

"हम सब आपको एक लंच पार्टी देना चाहती हैं।"

"किस खुशी में?" राजीव ने मुस्कुरा कर पूछा।

"आपकी सेंचुरी बनाने और हमारी टीम को विजय दिलाने की खुशी में। [illegible] आप ही के सर जाता है।" लड़की मुस्कुरा उठी।

और राजीव पार्टी के लिए इनकार न कर सका। वह लड़की जिसने राजीव को पार्टी के लिए आमंत्रित किया था शहर के सुप्रसिद्ध वकील द्वारकाप्रसाद दुबे की बेटी मीनाक्षी दुबे थी। अगले ही दिन मीनाक्षी ने अपनी सहेलियों के साथ होटल चन्द्रिका में राजीव को लंच पार्टी दी।

जिस वर्ष राजीव एम०एस-सी० पास हुआ उसी वर्ष मीनाक्षी भी बी०ए० पास हुई। दोनों का यह औपचारिक परिचय धीरे-धीरे घनिष्ठ होता गया युवक-युवती के घनिष्ठ परिचय का परिणाम सभी जानते है

राजीव और मीनाक्षी एक दूसरे स प्रेम करन लग

मीनाक्षी एक सभ्य और सुसस्कृत घराने की लड़की थी। ईश्वर ने उसे जितनी सुदरता दी थी उतनी ही प्रतिभा और विनम्रता भी। उसके पिता एडवोकेट दुबे के टक्कर का वकील शहर मे कोई दूसरा न था। सयोग से उद्योगपति संजीव शर्मा और एडवोकेट दुबे बड़े ही घनिष्ठ मित्र थे।

राजीव अपने पिता के 'रश्मि टेक्सटाइल्स' कपनी मे 'जनरल मैनेजर' के रूप मे वहाँ का काम देखता था। शाम को दफ्तर से निकलने के बाद वह प्राय. एक - दो घटे मीनाक्षी के साथ ही बिताता। कभी दोनों किसी रेस्टोरेन्ट मे मिलते। कभी किसी पार्क मे। किसी एकात स्थान पर मिलकर वे अपने भावी जीवन की योजना बनाते। निस्सदेह उन दोनों ने विवाह के पवित्र बधन मे बँध जाने का निर्णय ले लिया था।

एक शाम मीनाक्षी के पिता एडवोकेट दुबे के यहाँ एक शानदार पार्टी थी। उस पार्टी में संजीव शर्मा भी सपरिवार आमंत्रित थे। सो पार्टी में संजीव बाबू, उनकी पत्नी रश्मि और उनका छोटा बेटा समीर ये तीनों पहुँचे। राजीव नही आया या शायद लाया ही नही गया था। जब शर्मा परिवार की कार नेहरू नगर मे दुबे जी के बगले के सामने रुकी तो बाप-बेटी दोनो ने ही बढ़कर उनका स्वागत किया।

"प्रणाम आंटी" सुदरी मीनाक्षी ने मुस्कुराते हुए रश्मि के सामने अपने दोनों हाथ जोड़ दिये।

"हमेशा खुश रहो बेटी।" रश्मि ने मीनाक्षी को अपनी बाँहों का हार पहनाते हुए कहा।

पार्टी में सभी आनद ले रहे थे किंतु मीनाक्षी का अन्तर्मन अपने प्रियतम राजीव को ढूँढ़ रहा था-

'याद तू आये, मन हो जाये, भीड़ के बीच अकेला'

"डाक्टर साहब आपके बड़े भाई नही आये?" मीनाक्षी ने मौका पाते ही समीर से पूछा।

"राजू भैया। अरे वो तो बहुत बिज़ी रहते हैं। फैक्ट्री के काम से उन्हे फुरसत ही नही मिलती। बाबू जी तो अक्सर बाहर रहते हैं। भैया ही तो हैं जो कंपनी का सारा कारोबार संभालते हैं। हो सकता है वो अभी तक अपने आफिस में ही बैठे हों।"

फिर समीर ने पूछ लिया - "अरे हाँ। आप भैया को कैसे जानती है?

"हम दोनों सी०एम०डी० कालेज मे पढ़े है।" मीनाक्षी ने बताया।

"क्लासमेट्स थे आप लोग?"

"जी नही। मै आर्ट्स मे थी वो साइंस मे।"

"ओ, आई सी"

'दरअसल मै उनकी 'क्रिकेट फैन' थी।" मीनाक्षी ने हँसते हुए कहा।

"ओ, आई सी। वाकई भैया एक माहिर क्रिकेटमैन है। बाबू जी ने उन्हे बिजनेस मे लगा दिया वरना वे एक अच्छे खासे आलराउडर बन सकते थे।

उस रात पार्टी की भीड़भाड़ मे भी रश्मि की नजरे वहाँ सिर्फ दो व्यक्तियो पर केन्द्रित थीं। अपने बेटे समीर पर और उसके पास बैठी उससे हँस-हँस कर बाते करती मीनाक्षी पर। मीनाक्षी को पहले भी रश्मि ने दो तीन मर्तबा देखा था किंतु आज पहली बार उससे अधिक देर तक मिलने का मौका मिला। रश्मि मीनाक्षी के रूप, गुण और विनम्र व्यवहार से प्रभावित हुए बिना न रह सकी। रश्मि ने अपने मन मे एक निर्णय ले लिया।

रात मे पार्टी काफी देर तक चलती रही। संजीव बाबू जब अपने परिवार के साथ लौटने लगे तो दुबे जी अपनी बेटी के साथ उन्हे उनकी कार तक छोड़ने आये। समीर ने माता-पिता को कार की पिछली सीट पर बिठा दिया और स्वयं उसने ड्राइवर की सीट सम्हाल ली। समीर ने कार स्टार्ट किया। मीनाक्षी ने शर्मा दम्पत्ति को पुन. प्रणाम कहा और समीर को नमस्ते। 'गुड नाइट' की औपचारिकता के बाद शर्मा परिवार की कार चली गयी।

जब वे घर पहुँचे तो राजीव अपने शयन कक्ष में सो चुका था। समीर अपने कमरे में चला गया। शर्मा - दम्पत्ति भी अपने बेडरूम मे आ गया। रश्मि ने अपना मंतव्य पति पर जाहिर करने की गरज से कहा-

"क्यो जी, दुबे जी की बेटी आपको कैसी लगी?"

"कौन मीनाक्षी? वाकई बड़ी अच्छी लड़की है।" शर्मा जी ने अपने टाई की नाट ढीली करे हुए कहा। "यदि हम उसे अपनी बहू बना ले

तो कैसा रहेगा?" रश्मि ने पूछ ही लिया।

"अरे रश्मि! वाकई तुमने तो मेरे 'मन और मुंह' दोनों की ही बात छीन ली।" संजीव अपना कोट उतारते हुए चहक उठे। फिर आगे कहने लगे-

"मीना बिटिया जैसी सर्वगुण संपन्न बहू शायद, हमें चिराग ले कर ढूंढने से भी नहीं मिलेगी।" "तो फिर चिराग तले अंधेरा रखने की अब क्या जरूरत है? कल ही जा कर दुबे जी से बात पक्की कर लीजिए। चट मँगनी पट शादी हो ही जाय। मै इधर समीर को पटा कर रखती हूँ।"

"..समीर को ..." संजीव चौंके।

"हाँ।"

"लेकिन रश्मि! राजू बड़ा है। पहले शादी उसकी होनी चाहिए। फिर बाद में समीर की।" संजीव अब तक अपने कपड़े बदल कर स्लीपिंग सूट पहन चुके थे।

"जी नहीं। मीनाक्षी की जोड़ी समीर के साथ ही अच्छी लगेगी। मैं आज वहाँ पार्टी में सारा समय उन दोनों को ही साथ हँसते बोलते देखती रही। उन दोनों की जोडी तो राजा - रानी की जोड़ी लगती है।" "लेकिन हम यदि समीर की शादी पहले कर दें तो क्या राजू को 'फील' नहीं होगा। आखिर वह समीर से चार साल बड़ा है।" संजीव बोल उठे।

"मैंने कब कहा कि राजू की शादी नही होनी चाहिए। राजू के लिए आप लड़की ढूँढिये। समीर के लिए मैने ढूँढ लिया है - मीनाक्षी को।"

संजीव पत्नी के साथ ज्यादा वाद-विवाद नहीं कर सके। जब भी दोनो पुत्रों से संबंधित कोई विवाद उनके बीच उठता तो विजय रश्मि की ही होती थी और समीर के पक्ष का पलड़ा ही झुक जाता था। अततः संजीव बाबू को बोलना ही पडा - "ओ०के० भई! जैसी तुम्हारी मर्जी। मै कल ही दुबे जी से बात करता हूँ।"



दिसम्बर की उस सर्द सुबह को सूरज की किरणें हौले-हौले सेंक रही थीं। सजीव शर्मा और उनका पूरा परिवार अपनी जापानी टोयोटा

कार में आज पिकनिक पर जा रहा था। और इस परिवार के साथ जा रही थी रश्मि के द्वारा विशेष रूप से आमंत्रित अतिथि - मीनाक्षी। आज कार ड्राइव कर रहा था राजीव। सामने उसके बगल में बैठी हुई थी मीनाक्षी। पीछे की सीट पर शर्मा-दम्पत्ति और समीर थे। सभी कार में प्रसन्नचित्त बातें करते हुए, लतीफेबाज समीर के चुटकुलों का आनंद लेते हुए चले जा रहे थे। मीनाक्षी को अपने बीच और इतने निकट पा कर शर्मा परिवार का हर सदस्य आज बेहद खुश था और आज मीनाक्षी भी कम खुश न थी।

'प्रिय के संग का सुख तुम क्या जानो'

कोई पचास किलोमीटर की दूरी तय करने के बाद उनकी कार रमणीक गाँव नवापारा के रेस्ट हाउस की सीमा के भितर रुक गई। रेस्ट हाउस घोंघा नदी के तट पर स्थित था और चारो ओर थे नयनाभिराम दृश्य। नदी में अनेक मोटर बोट आ जा रहे थे। नदी के उस पार पहाड़ों के अन्दर बड़ी ही आकर्षक गुफाएँ थीं। पर्यटक गण उन गुफाओं को देखने के लिए नदी के उस पार जा रहे थे। कुछ देख कर आ रहे थे।

तय किया गया कि पहले लंच खा लें फिर थोड़े विश्राम के बाद नदी के उस पार गुफा - दर्शन के लिए चला जाय। पाँचों जन आवश्यक सामान लिये एक घने पेड़ की छाया में जा बैठे। रश्मि ने लंच का पर्याप्त सामान रख लिया था। पूड़ी, पुलाव, आलू-गोभी-मटर की सब्जी, तले हुए आलू की एक सूखी सब्जी, आम, नींबू और मिर्च के अचार और फिर ऊपर से कुछ फल केले, संतरे, सेब आदि। मीनाक्षी ने पेपर-प्लेट में खाना निकाल कर सब को सर्व किया। लंच खाने के बाद सब ने ठंडा पानी पिया। फिर पाँचों जन के बीच ताश की बाजियां चलती रहीं।

दोपहर के तीन बज चुके थे। शर्मा परिवार ने तय किया कि अब गुफाएँ देखने के लिए नदी के उस पार चला जाय। पाँचों व्यक्ति एक मोटर-बोट में जाकर बैठ गये। इनका मोटरबोट नदी की छाती पर जलसमूह को चीरता दूसरे तट की ओर भागा जा रहा था। दो - तीन मोटर बोट दूसरी तट से इस ओर भी लौट रहे थे। तभी अचानक उस ओर से आता एक मोटरबोट शर्मा-परिवार की मोटरबोट से आ टकराया। दोनो मोटरबोटों की भिड़त इतनी जोरो से हुई कि दोनो ही बोट बुरी

तरह से तत्काल स्नान लेते और संजीव बाबू की पत्नी रश्मि बोट से उछल कर नदी में गिर पड़ी। रश्मि नदी में बहने लगी। चारों ओर कोहराम मच गया। हर कोई चिल्ला रहा था - "अरे बचाओ, इन्हें बचाओ।" जब तक मोटरबोट सम्भलती पानी में रश्मि बहती हुई दूर निकल गयी थी। संजीव बाबू, राजीव, समीर और मीनाक्षी सारे आदि, यह हृदय विदारक दृश्य किंकर्तव्यविमूढ़ हो कर देख रहे थे। यह सब कुछ तो बस एक पल में ही हो गया था। तभी राजीव ने आव देखा न ताव फूर्ति से अपना शर्ट और स्वेटर निकालकर बोट पर फेंक दिया और "माँ. .!!!" दहाड़ता हुआ नदी में कूद पड़ा। राजीव तेजी से तैरता हुआ रश्मि की ओर बढ़ा जा रहा था। अन्ततः उसने जा कर माँ की बाँह पकड़ ली और उसे साथ ले जल को चीरता हुआ नदी के तट की ओर बढ़ने लगा। जल से कठिन संघर्ष करके उसने अपनी माँ को वापस छीन तट पर आ खड़ा हुआ। वह बुरी तरह थक चुका था। रश्मि बेहोश हो चुकी थी। थोड़ी ही देर में संजीव बाबू, समीर और मीनाक्षी तथा वहाँ उपस्थित कुछ लोग उनकी सहायता के लिए दौड़ पड़े। तत्काल दोनों को रेस्ट हाउस ले जाया गया जहाँ समीर ने दोनों की ही प्रारम्भिक चिकित्सा शुरू कर दी।

घर आकर रश्मि कुछ दिनों तक अस्वस्थ पड़ी रही। राजीव ने तो शीघ्र ही स्वास्थ्य लाभ प्राप्त कर लिया और माँ की सेवा सुश्रुषा में भी लग गया था। समीर हर रोज अस्पताल जाने से पहले माँ को चैक कर लेता, इंजेक्शन देता फिर दवाइयों की हिदायतें देकर हास्पिटल चला जाता। माँ की स्वस्थता की वजह से राजीव इन दिनों घर पर ही रहता। दिन भर उनके सिरहाने बैठा रहता। समय-समय पर माँ को दवाइयाँ देता। प्रायः पूछते रहता-

"माँ अब कैसी तबीयत है?

"आज कैसा लग रहा है माँ?

"माँ आरेंज जूस लेंगी?"

महीने भर में रश्मि भी पूर्ण रूप से स्वस्थ हो गयी।

उद्योगपति संजीव शर्मा का आलीशान बंगला 'रश्मि-भवन' आज दूर से ही जगमगा रहा था। बंगले को किसी दुल्हन की तरह सजाया गया था। आज यहाँ डॉ० समीर शर्मा का 'बर्थ डे' तो मनाया ही जा रहा था साथ ही-साथ कुछ और खुशखबरियों की भी घोषणाएँ होने

वाली थी। आज वहाँ 'रश्मि टेक्सटाइल्स' के अनेक अधिकारी और कर्मचारी गणों के अलावा बिलासपुर शहर के अनेक बुद्धिजीवी, उद्योगपति तथा सभ्रात लोग आमंत्रित थे। राजीव के कुशल प्रबंध मे 'रश्मि टेक्सटाइल्स' ने गत वर्ष लाखों का मुनाफा कमाया था। सो संजीव बाबू उद्योग के कर्मचारियों को 'अच्छा खासा बोनस' देने की भी घोषणा करने वाले थे।

समीर 'लाइट ब्ल्यू कलर' के सूट में सफेद शर्ट पर लाल चेक की टाई लगाये बड़े हाल मे मेहमानों के आकर्षण का केन्द्र बना हुआ था। रह-रह कर वहाँ 'हैप्पी बर्थ डे टू यू' गूँज उठता था। टेबलों पर समीर के प्रेजेंट के ढेर लगते जा रहे थे। संजीव बाबू व राजीव भी सूट - टाई मे सजे सँवरे वहाँ मेहमानो का स्वागत कर रहे थे। कोई विशेष अतिथि जैसे- कलेक्टर साहब, कमिश्नर साहब आदि आते तो राजीव उन्हें ले जा कर पिता से मिलवा देता यदि संजीव कहीं और व्यस्त हो तो।

एडवोकेट दुबे जी की कार भी संजीव बाबू के बँगले के सामने पहुँची। वकील साहब बेटी मीनाक्षी के साथ रश्मि-भवन के बड़े हाल में दाखिल हुए। मीनाक्षी ने राजीव के निकट जा कर धीरे से कहा - "हैल्लो राजू" और एक मीठी मुस्कान बिखेर दी। सुंदर सी साडी ब्लाउज़ और हल्के गहनों में वह आज बेहद आकर्षक लग रही थी। फिर वह समीर के पास चली गयी। उसके प्रेजेंट का बाक्स उसे थमाते हुए उसने कहा, "डाक्टर साहब जनम-दिन मुबारक हो। हैप्पी बर्थ डे टू यू।"

"थैंक यू मीना जी, थैंक यू व्हेरी मच।" समीर ने विनम्रता से कहा।

समीर से कुछ औपचारिक बाते पूरी करके वह रश्मि के पास चली गई जहाँ वह अनेक महिला अतिथियो से घिरी बैठी थी। रश्मि मीनाक्षी को देखते ही चहक उठी और उसने उसे अपनी बाँहों में भर लिया।

सभी अपेक्षित मेहमान आ चुके थे। समीर के 'बर्थ डे' मनाने की विधियाँ पूरी हुई। समीर ने जलती हुई मोमबत्तियाँ फूँक कर बुझाई फिर केक काटा और सारा हाल 'हैप्पी बर्थ डे टू यू', 'हैप्पी बर्थ डे टू समीर' की आवाजो से गूँज उठा। राजीव ने अपने छोटे भाई समीर को "हैप्पी बर्थ डे टू यू" कहता हुआ अपने हाथों में उठा लिया।

'बर्थ डे' कार्यक्रम के बाद संजीव बाबू ने एक छोटा सा भाषण दिया जिसमें उन्होने अपनी कंपनी के कर्मचारियों को बोनस देने की

घोषणा की और सारा हाल तालियों की गड़गड़ाहट से गूँज उठा।
फिर सजीव ने कहा, "अब डिनर हो जाय। उसके बाद हम आप सब को एक और खुशखबरी सुनाने जा रहे हैं।"

डिनर समाप्त हुआ। अब सजीव शर्मा वहाँ उपस्थित लोगों को वह 'खुशखबरी' सुनाने जा रहे थे जो अब तक वहाँ उपस्थित केवल चार व्यक्तियों को मालूम था। एडवोकेट दुबे, स्वयं सजीव बाबू, उनकी पत्नी रश्मि और समीर को।

सजीव चार-पाँच सीढ़ियाँ चढ़कर थोड़े ऊँचे स्थान पर खड़े हो गये। उन्होंने उपस्थित जनसमूह का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट किया और कहा - "आप सब को यह जानकर खुशी होगी कि हमने अपने दोनों बेटों के शुभ-विवाह करने का फैसला कर लिया है। तो हमारी बड़ी बहू होने जा रही है यानी चिरंजीव बाबू राजीव अंबिकापुर निवासी देवदत्त पांडे जी की बेटी उषा ."

आज रह रह कर 'रश्मि-भवन' का बड़ा हाल तालियों की गड़गड़ाहट से गूँज रहा था। .... और हमारी छोटी बहू होने जा रही है यानी चिरजीव बाबू समीर की पत्नी बिलासपुर निवासी एडवोकेट दुबे की बेटी मीनाक्षी।

देर तक हाल तालियों की गड़गड़ाहट और करतल ध्वनि से गूँजता रहा। वहाँ तालियो की गड़गड़ाहट का स्वर दो प्राणियों को ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे उनके गालों पर लगातार थप्पड़ पड़ रहे हो।

तीन दिन बाद राजीव और मीनाक्षी एकांत स्थान पर मिले। मीनाक्षी राजीव की बाहों में गिरकर सिसकने लगी।

"राजू हमे जल्दी ही कुछ करना चाहिए। हमारे माता-पिता ने बिना हमसे पूछे जो निर्णय लिया है, वह हमारे जीवन में विष घोल देगा। शादी-ब्याह कोई गुड्डे गुड्डी का खेल नही। हमारी सारी जिंदगी का प्रश्न है। राजू मै तुम्हारी सौगंध खा कर कहती हूँ यदि मेरा ब्याह तुम्हारे साथ नहीं हुआ तो मैं अपनी जान दे दूँगी।"

"पागल हो तुम मीनू।" राजीव ने मीनाक्षी के मुख पर अपने हाथ धर दिये।



प्रात नौ बजे का समय।

शहर का मिशन अस्पताल मरीजों की भीड-भाड से व्यस्त हो चला था। डॉ० समीर शर्मा भी मरीजों की जाँच करने और उन्हें दवाई लिख कर देने में व्यस्त था। तभी एक नर्स ने एक चिट ला कर उसे दी। समीर ने उसे पढ़ा। लिखा था - 'इसी वक्त आपसे मिलना चाहती हूँ। 'मीनाक्षी दुबे' एकाएक समीर कुछ समझ न सका। खैर उसने नर्स से कहा कि वह मीनाक्षी को उसके 'ब्रेक रूम' में बिठा आये। थोड़ी ही देर में समीर वहाँ पहुँचा। ''कहिये मीना जी। कैसी है आप।'' समीर ने पूछा। ''मै ठीक हूँ।''

''कैसे तकलीफ की? मुझे बुलवा लिया होता।'' ''नही कोई बात नही। आप से कुछ खास बात करनी है। माफी चाहती हूँ कि यहाँ आकर आपको डिस्टर्ब किया।'' मीनाक्षी ने विनम्रता से कहा। ''अरे बिलकुल नही। डॉ० स्काट तो मरीजों को देख ही रहे है।''

''कहिये क्या लेगी? चाय, काफी या कोल्ड ड्रिंक।''

''थैंक यू डाक्टर साहब। इस वक्त कुछ नही लूँगी।''

''अरे आप मुझे समीर कहा करें'' समीर ने निवेदन किया और मीनाक्षी के साथ स्वयं भी मुस्कुरा उठा।

कुछ इधर-उधर की औपचारिक बातो के बाद मीनाक्षी अपने मतव्य पर आ गयी।

''समीर जी, मै आप से जो कहने आयी हूँ, दरअसल वह मुझे अपने पिता से ही कहना चाहिए था पर किसी वजह से उनसे कह न सकी।''

''हॉ, हॉ बोलिये।''

''. . बात दरअसल ये है समीर जी कि मै आपसे ब्याह नही कर सकती।''

समीर के मन को गहरा आघात लगा। काफी देर तक वह निस्तब्ध बैठा रहा। फिर उसने कहा-

''क्या मैं इसकी वजह पूछ सकता हूँ?''

''मैं किसी से प्रेम करती हूँ।''

थोडी देर दोनो मौन बैठे रहे।

''क्या मैं उस खुशनसीब का नाम जान सकता हूँ।'' समीर ने हिम्मत

करके पूछ लिया।

"राजीव शर्मा जो आपके बड़े भाई हैं"

"क्या...?"

समीर जैसे आसमान से गिर पड़ा। मानो उसे अपने कानों पर विश्वास न हुआ हो। जैसे उसके सपनों के महल पर किसी ने बम विस्फोट कर दिया था।



समीर अपने बेडरूम में बिस्तर पर लेटे हुए विचारों में खोया हुआ था। अब उसके मन मे कोई कसक थी, कोई दर्द था, कोई पछतावा था- तो इस बात का कि वह 'प्रणय-प्रतिद्वंद्वी' बना भी तो किसका? अपने ही सगे बड़े भाई का। उस भाई का जो उसे अपने प्राणों की तरह प्यार करता है। उससे मित्रवत् व्यवहार रखता है। उसे कई ऐसे प्रसंग याद आये जब उसने सोचा था 'काश ईश्वर सभी को राजीव भैया की तरह ही भाई देता। बड़े भाई ने आज तक उसे एक भी कटु वाक्य न कहे थे। समीर की हर सफलता पर उसे कोई पहली बधाई देने वाला होता तो उसका अपना ही बड़ा भाई। मानो वह बड़ा भाई न हो उसके लिए भगवान् हो। समीर ने मन-ही-मन निर्णय ले लिया 'नहीं, वह अपने देवता तुल्य भाई के प्रेम-पथ में हर्गिज नहीं पत्थर नहीं बनेगा। काश! उसे यह पहले ही मालूम होता तो उस दिन अपने 'बर्थ डे' के ही दिन वह मीनाक्षी का हाथ बड़े भाई के हाथ में दे दिया होता।'

तभी रश्मि एक गिलास दूध लिये समीर के कमरे में प्रविष्ट हुई। वह गुनगुनाती हुई उसके सिरहाने 'टेबल - लेम्प' पर गिलास रख कर जाने लगी। समीर ने उसे रोका-

"थोड़ी देर बैठो माँ, तुम से कुछ बातें करनी हैं।"

"क्या बात है?" रश्मि ने पूछा और पुत्र के पलँग पर ही वह बैठ गयी। वह समीर के बालों से खेलने लगी।

"भैया कहाँ है?' समीर ने पूछा।

"अपने कमरे में" रश्मि ने जवाब दिया।

"क्या कर रहे है?"

"बिजली जल रही है, शायद पढ़ता हो।"

"और बाबू जी?"

"वह तो सो गये।"

रश्मि ने पूछा - "अच्छा बोलो क्या कह रहे थे तुम।" "माँ आज मीनाक्षी जी मुझसे मिलने मेरे हॉस्पिटल आयी थीं।" "अच्छा तो ये बात है। उसने तुमसे मिलना-जुलना शुरू कर दिया है।" रश्मि ने हँस कर कहा।

"नहीं माँ। तुम गलत समझ रही हो। मीना जी मुझसे कुछ और ही कहने आयी थीं।"

"क्या कहने आई थी, जरा मैं भी तो सुनूँ।"

समीर थोड़ी देर खामोश लेटा रहा।

"बोल न, मीना बिटिया तुमसे क्या कहने आयी थी?" रश्मि की जिज्ञासा बढ़ती जा रही थी।

"माँ, मीना जी मुझसे शादी नहीं कर सकतीं।"

"क्या...?" रश्मि चकराई। फिर उसने संयत होकर पूछा-

"क्यो नहीं कर सकती?"

"माँ, वह किसी से प्रेम करती हैं। ज़ाहिर है कि शादी भी वह उसी से करना चाहेंगी।"

"कौन है वह लड़का।" रश्मि के स्वर में कर्कशता थी। "कोई गैर नही है माँ। तुम्हारा अपना ही बेटा है - राजू भैया।"

"क्या बकते हो।" रश्मि को जैसे अपने कानों पर विश्वास न हुआ। उसके मन मे कोई ज्वालामुखी भड़कने लगी थी।

समीर कहता जा रहा था।

"....हाँ माँ मुझे आज ही पता चला कि राजू भैया और मीना जी एक दूसरे से अटूट प्रेम करते हैं। ठीक भी तो है माँ- जब दो दिल एक-दूसरे को चाहते है तो उन्हे अलग करना पाप होगा। अब आप लोग राजू भैया की शादी मीना जी से कर दें और फिर मेरी अभी उमर ही क्या है। मैं एम०डी० भी करना चाहता हूँ। दरअसल मैं तो एम०डी० करने के बाद ही शादी करना चाहता था। रही भैया की शादी अंबिकापुर मे तय होने

की बात तो कहा जाकर हम लोग पाते हैं [illegible] ऐसा मौका [illegible]
मुझे मीनाक्षी जी भाभी के रूप में मिल जायेंगी। इससे बढ़कर फिर
क्या कम सौभाग्य की बात है।"

रश्मि काफी देर तक मौन बैठी रही। फिर चुपचाप पुत्र के कमरे से बाहर निकल गयी।

शाम ढल रही थी। संजीव बाबू और समीर दोनों ही 'रश्मि सदन' से बाहर थे। राजीव अभी-अभी काम से लौटकर अपने कमरे में आया था। अपनी टाई की नाट ढीली करता हुआ वह खिड़की के निकट आ कर खड़ा हो गया। उसकी पलकें बोझिल थीं और मन भारी। राजीव को यह भी न मालूम था कि कल मीनाक्षी, समीर से मिलने गयी थी।

दरवाजे पर किसी की आहट हुई।

"कौन?" राजीव ने मुड़कर कहा और साथ ही कमरे की बिजली जला दी।

दरवाजे पर रश्मि खड़ी थी। उसके हाथ में एक ट्रे था जिस पर एक गिलास पानी और एक कप चाय रखी थी। माँ को सहसा अपने कमरे में आया देख उसे तनिक विस्मय हुआ।

"अरे माँ! तुम.... आओ बैठो।"

रश्मि ने ट्रे लाकर राजीव के पास ही लैम्प वाले टेबल पर रख दिया।

"थैंक यू माँ।" राजीव ने माँ की ओर देख कर मुस्कुरा दिया। वह अपना कोट और टाई निकाल कर कुर्सी पर बैठ गया। पानी पी कर वह चाय की चुस्कियाँ लेने लगा। माँ को अब तक खड़ी देख उसने विनम्रता से कहा-

"बैठो न माँ।"

रश्मि उसके सामने एक दूसरी कुर्सी पर बैठ गयी। उसका मुखमंडल गंभीर था।

"राजू"

"हाँ माँ"

"मै तुमसे कुछ पूछने आयी हूँ।"

राजीव ने चाय की घूँट ली और कप को प्लेट के ऊपर रखकर

बोला - "पूछो माँ

"तुम समीर की खुशियाँ को तबाह करने वाले कौन होते हो? रश्मि का आक्रोशपूर्ण स्वर उभरा।

"क्या मतलब माँ . " राजीव इस अप्रत्याशित प्रश्न के लिए तैयार नहीं था।

"क्या यह सच नहीं है कि तुम समीर और मीनाक्षी के ब्याह के बीच एक दीवार बन गये हो?"

रश्मि ने पुन. कटाक्ष किया।

" .नहीं तो माँ "

"हाँ तुम दीवार बने हो। तुम नही चाहते कि समीर की शादी मीनाक्षी के साथ हो। मै जानती हूँ तुम समीर से जलते हो।"

"ये क्या कह रही हो माँ. "

"मै ठीक कह रही हूँ। तुम समीर की खुशियों तबाह करने पर तुले हुए हो..."

"यह गलत है माँ। समीर तो मेरे भरत जैसा भाई है। मेरा अपना खून है। उसकी खुशियों के लिए तो मै अपनी जान भी दे सकता हूँ।

"बस करो ये फिल्मी भाषण। मै खूब जानती हूँ। जब से हमने समीर का ब्याह तय किया है तभी से तुम उखड़े-उखड़े रहने लगे हो और तुमने मीना से मिल कर उसे भड़काया भी है।"

"यह सच नहीं है माँ। बात कुछ और है। विश्वास करो माँ। मीनाक्षी वाकई मुझसे प्रेम करती है। समीर से ब्याह न करने का निर्णय उसका अपना है मेरा उस पर कोई दबाव नहीं।"

यह सुनकर रश्मि निरुत्तर हो गयी। दो मिनट तक वह खामोश बैठी रही। फिर उसने कहा-

"तुम कहते हो तुम समीर की खुशियों के लिए अपनी जान भी दे सकते हो। अगर तुम समीर से सचमुच इतना ही प्यार करते हो तो तुम्हे समीर और मीना के रास्ते से हटना होगा।"

माँ के मुँह से यह बात सुनकर राजीव मन-ही-मन तिलमिला उठा। शायद किसी अन्य व्यक्ति से यही बात सुनकर उसे इतना गहरा आघात न लगता। "रश्मि अरे भई कहाँ हो तुम। एक कप चाय मिलेगी। "

संजीव बाबू अभी अभी दफ्तर से घर आए थे [illegible]
आवाज लगा रहे थे। पति की आवाज सुनते ही रश्मि राजीव के कमरे से बाहर निकल गयी।

माँ के जाने के बाद राजीव कमरे में अकेला रह गया था, ठगा सा, हारे हुए जुआरी की तरह। आखिर माँ के हृदय में अपने ही पुत्र के लिए इतना छल-कपट क्यों? एक बेटे के प्रति इतना प्यार और दूसरे के प्रति इतना निर्मोह क्यों? माँ की प्रबल इच्छा यदि मीनाक्षी को बहू के रूप में पाने की ही है तो उसका ब्याह राजीव के साथ भी हो सकता था। राजीव अपने प्रति माँ के कटु और अस्वाभाविक व्यवहार के रहस्य को आज तक न समझ सका। अचानक राजीव के मन-मस्तिष्क में एक विचार ने जन्म लिया - 'कहीं रश्मि उसकी सौतेली माँ तो नहीं? क्या उसके पिता की कोई और भी पत्नी थी? कहीं वह उसी की संतान तो नहीं?...' कौन दे सकता है इन प्रश्नों के उत्तर - निस्संदेह उसके पिता - संजीव बाबू।

'रश्मि टेक्सटाइल्स' मिल के कैम्पस में ही कंपनी का 'गेस्ट हाउस' था। राजीव ने संजीव बाबू से निवेदन कर रखा था कि वे शाम को दफ्तर के बाद उसे वहाँ मिलें। कुछ जरूरी बातें करनी है।

शाम के छह बज चुके थे। संजीव बाबू और राजीव गेस्ट हाउस के एकांत मे आ बैठे। कुछ इधर-उधर की कंपनी संबंधी बातों के बाद राजीव ने भूमिका बाँधी, फिर कहा-

"बाबू जी, जब से मैंने होश संभाला है तब से आज तक मैं यही महसूस करता आया हूँ कि माँ मुझसे घृणा करती है, नफ़रत करती है।"

"नहीं बेटे, यह तुम्हारी भूल है। समीर और तुममे हमारे लिए कोई फर्क नही।" संजीव बाबू ने अत्यंत मीठे स्वर में कहा।

"आपके लिए न सही लेकिन माँ के मन मे मुझ में और समीर मे बड़ा गहरा फर्क है बाबू जी। "नहीं राजू, तुम गलत हो।"

"काश! मैं गलत होता। लेकिन माँ कल जिस तरह से मेरे साथ पेश आई है, जो अन्याय वह करने पर तुली हुई हैं शायद कोई माँ अपने बेटे के साथ नहीं करेगी। "कैसा अन्याय राजू?" संजीव बाबू चौंके। "बाबू जी मैं और मीनाक्षी एक दूसरे के साथ प्रेम करते हैं. "

" क्या? " संजीव बाबू जैसे आसमान से गिरे।

"हाँ बाबू जी, हम एक - दूसरे को बहुत चाहते हैं ." "बेटे" संजीव बोल उठे "तब तो अनजाने में सचमुच हमसे बहुत बड़ी गलती हो गई है। लेकिन अभी बिगड़ा कुछ भी नहीं है। मैं दुबे जी से बात करूँगा। अंबिकापुर वाले पांडे जी से मैं खुद माफी माँगने जाऊँगा। तुम्हारी शादी मीनाक्षी के साथ ही होगी।" "लेकिन माँ ऐसा नही चाहती। और मुझे दुख इस बात का नही है कि वे मेरी शादी मीनाक्षी से नहीं होने देना चाहती या वे समीर की शादी मीनाक्षी से करना चाहती है। मुझे तो दुख इस बात का है कि वे मुझसे इतनी नफरत करती है। उनके मन मे मेरे प्रति नफरत का कारण क्या है?" संजीव खामोश थे।

"बाबू जी"

"हाँ राजू।"

"क्या आपकी पत्नी रश्मि मेरी सगी माँ हैं?"

"क्या कह रहे हो राजू?" संजीव इस अप्रत्याशित प्रश्न के लिए तैयार नहीं थे। "हाँ बाबू जी! सच-सच बताइये। क्या मैं माँ का सगा बेटा हूँ? क्या उन्होंने मुझे अपनी कोख से जन्म दिया है? या मेरी माँ कोई और थी? और यदि कोई और थी तो अब वो कहाँ है? जीवित भी है या मर गयी?" राजीव एक साथ अनेक प्रश्न पूछ उठा।

"बेटे, रश्मि ही तुम्हारी माँ है। उसी ने तुम्हें अपनी कोख से जनम दिया है।"

"तो फिर मेरे प्रति माँ के मन में नफरत का कारण? क्या मैने उन्हे कोई दुख पहुँचाया है? कोई तकलीफ दी है। उन्हे कोई पीडा पहुँचाई है?, उनकी नजरो मे कोई जुर्म किया है? कोई अपराध किया है? उनका अपमान किया है? उनकी किसी भावना को आघात पहुँचाया है? ."

"नही राजू नही..." संजीव बाबू ने राजीव की भावनाओं के बाँध को रोकने की नाकाम कोशिश की।

"तो फिर क्या किया है मैंने माँ के साथ?. ." राजीव लगभग चीख उठा।

अब संजीव बाबू की हालत ऐसी हो गयी थी जैसे वे जिरह मे अपने विरोधी पक्ष के वकील से पूर्ण रूपेण परास्त हो चुके हों। वे

अत्यंत आर्द्र स्वर में मृदुवाणी से कहने लगे

"बेटे, तुमने अपनी माँ के साथ आज तक कोई अन्याय नहीं किया है। तुम तो एक अनमोल हीरे हो बेटे। मुझे भी अफसोस तो सिर्फ इसी बात का है कि तुम्हारी माँ का ओछा हृदय तुम्हें आज तक पहचान न सका। दरअसल किया किसी ने और भर कोई और रहा है।" सजीव बाबू का कंठ भर उठा।

"क्या मतलब बाबू जी?" राजीव तनिक चौंका। "बेटे, तुम्हारे जन्म की कहानी बड़ी दर्दनाक है। बड़ी कोशिश की, कि वह चिर काल अज्ञात के ही गर्भ में पड़ी रहे पर लगता है कि वह अभागिनी दास्तान आज जन्म लेना ही चाहती है। शायद ईश्वर को यही मंजूर है कि मैं आज तुम्हारे जन्म की कहानी तुम्हें ही कह सुनाऊँ?"

राजीव को लगा कि कोई भयावह तूफान आने ही वाला है। एक, अज्ञातपूर्ण भय से उसकी आत्मा काँप उठी। जैसे उसे फाँसी के तख्ते की ओर चले चलने का संकेत कर दिया गया हो। इसके बावजूद भी वह अपनी 'जन्म-कथा' जानने के लिए व्यग्र हो उठा।

"बाबू जी मैं अपने जन्म की दास्तान जानना चाहता हूँ।" राजीव ने कहा।

अंतत: सजीव बाबू राजीव के जन्म की रहस्यमयी कथा उसे बताने लगे-

"बरसों पहले की बात है। मैं अपने दोस्त पकज के साथ इंदौर में रहता था। हम दोनों वहाँ एक कपड़ा मिल में नौकरी करते थे। हम दोनों एक किराये के मकान मे साथ ही रहते थे। एक गरीब और बेसहारा सुन्दर युवती हमारे घर का काम काज करती थी। उसका नाम गौरी था। गौरी हमारे लिये भोजन भी बनाती थी।

एक रात की बात है। मैं अपने मिल में ओवरटाइम काम कर रहा था। हमारे घर में गौरी हमारे लिए भोजन बना रही थी। मेरा दोस्त पंकज कहीं से शराब पी कर घर लौटा। घर मे सुंदर जवान लड़की को अकेली देख कर पकज की नीयत खराब हो गयी। भोजन तैयार करने के बाद गौरी अपने झोपड़-पट्टी लौटना ही चाहती थी कि पंकज ने उस भोली-भाली युवती को किसी बहाने अपने बेडरूम में बुला लिया। पहले तो उसने गौरी को बहला-फुसला कर अपनी वासना शांत करने की कोशिश की। लेकिन गौरी ने माफी चाहते हुए घर की राह ली।

किन्तु पंकज उसे घर लौटने देता तब न। भेड़िये पंकज ने असहाय गौरी को पकड़ लिया। गौरी अपनी शक्ति भर विरोध करती रही, चीखती रही, चिल्लाती रही किंतु उसकी चीखें गरजते - घुमडते बादल और मूसलाधार बारिश के शोर में ही दब कर रह गई। पंकज ने मासूम गौरी के साथ बलात्कार करके अपनी हवस बुझा ली थी।

उस रात जब मैं घर पहुँचा तो वहाँ गौरी को रोते-बिलखते पाया। गौरी ने रो-रोकर मुझे सब कुछ बता दिया।

पंकज के इस कुकृत्य को सुनकर मेरे क्रोध की सीमा न रही।

''पंकज!!! . .'' मैं दहाड़ता हुआ पंकज की ओर दौड़ा। शायद मेरे एक ही मुक्के से पंकज को होश आ गया था। मुझे गुस्से से आगबबूला होते देख पंकज घर से निकल कर भागा। मैं भी उसके पीछे भागा। पंकज भागता जा रहा था। मैं उसका पीछा कर रहा था। अंततः पंकज एक ट्रेन में जा चढ़ गया जो शायद सिगनल के इंतजार में खड़ी थी। इससे पहले कि मैं ट्रेन तक पहुँचता, ट्रेन चली गयी और मैं उसके पीछे दौड़ता ही रह गया।

मैंने पंकज को बहुत ढूँढा लेकिन आज तक मुझे वह कहीं नहीं मिला। थोड़े दिनों बाद गौरी से मुझे पता चला कि वह गर्भवती हो चुकी है। गौरी मेरे पास आ कर फूट-फूट कर रोने लगी, ''मैं अब कहाँ जाऊँ बाबू जी? क्या करूँ?''

''रो मत गौरी। मैं पंकज को कहीं से भी ढूँढ़ कर लाऊँगा और उसके साथ तुम्हारी शादी करवाऊँगा।'' मैंने गौरी को सात्वना देने की कोशिश की। ''नहीं बाबू जी नहीं। अब वह लौट कर कभी नहीं आयेगा। और यदि आ भी गया तो मैं उस राक्षस के साथ कभी शादी नहीं करूँगी।''

फिर मैंने सोचा गौरी का गर्भपात करवा दिया जाय। उसे ले कर मैं दो - तीन डाक्टरों के पास गया। पर डाक्टरों ने यही कहा कि गर्भपात गौरी की जान के लिए खतरा ले सकता है। अंत मे मैंने निश्चय किया कि यदि गौरी राजी हो जाय तो मैं स्वयं उससे शादी कर लूँगा। जब मैंने अपना निर्णय गौरी को बताया तो वह खुशी और कृतज्ञता से मेरे पैरों पर गिर पड़ी। और मैंने एक मंदिर में जाकर गौरी से शादी कर ली। गौरी से ब्याह करके मैं इंदौर से बिलासपुर चला आया।

ताकि उसकी पिछली जिंदगी पर कोई उँगली न उठा सके। यहाँ आ कर हम ने एक नई जिंदगी शुरू की। खुद का कारोबार शुरू किया। शादी के बाद मैंने गौरी का नाम भी बदल दिया। उसका नया नाम रखा रश्मि।

शादी के बाद रश्मि मेरे साथ खुश थी। किंतु उसे अपने पेट में पल रहे पंकज के बच्चे से दिन प्रतिदिन नफरत होती जा रही थी। मैं उसे समझाता-

"तुम्हारे साथ जो कुछ हुआ है उसमें इस फूल का क्या दोष है? बच्चे भगवान् का रूप होते हैं।" लेकिन रश्मि के मन में पंकज के उस बच्चे के प्रति ममता न जागी। समय आने पर रश्मि ने एक लड़के को जन्म दिया। बच्चा घर में पलने-बढ़ने लगा। पर बेचारा अबोध बालक अपनी माँ के प्रेम से उपेक्षित था। मैंने उस बच्चे के लिए घर में एक आया का प्रबंध कर दिया था।

"आज वह बच्चा एक गुणी, सच्चरित्र और होनहार युवक बन चुका है। आज वह लाखों में एक है। हर कोई उसे प्यार करता है लेकिन मुझे दुख है कि आज भी वह अभागा अपनी जन्म देने वाली माँ की नफरत और उपेक्षा का शिकार है।"

राजीव निस्तब्ध, ध्यान-मग्न संजीव बाबू की बातें सुनता रहा। उसे यह समझते तनिक भी देर न लगी कि वह स्वयं ही पंकज के पाप का स्मृति चिह्न और मासूम गौरी की मजबूरियों की गठरी था।

"तो वह अभागा मैं ही हूँ!" राजीव अत्यंत ही कातर कंठ से कह उठा।

"हाँ राजू! तुम पंकज के ही बेटे हो। तुम्हारा पिता मैं नहीं।" संजीव बाबू ने एक अत्यंत कटु यथार्थ राजीव के समक्ष रख दिया था।

संजीव बाबू आगे कहने लगे-

"तुम्हारे जन्म के चार साल बाद रश्मि ने मेरे बेटे समीर को जन्म दिया। उसके पैदा होने पर हम दोनों को आपार खुशी हुई। मैं पहली बार पिता बना था और रश्मि को भी समीर के पैदा होने पर सही अर्थों में मातृत्व-सुख का अनुभव हुआ था। पर बेटे राजू, मैंने तुम्हें पुत्रवत् स्नेह देने में कोई कसर उठा नहीं रखा। दुनिया के सामने तुम

आज भी मेरे बेटे हो और हमेशा रहोगे। मेरे मन मे तुम्हारे और समीर के लिए कोई फर्क नही है।''



रात नौ बजे के करीब संजीव बाबू और राजीव घर लौटे। राजीव रात भर सो न सका। अपने बिस्तर पर पड़े-पडे वह बेचैनी मे करवटे बदलता रहा। सुबह जब वह अपने बिस्तर से उठा तो उसने एक निश्चय कर लिया था।

सजीव बाबू नाश्ता करके दफ्तर जा चुके थे। समीर को भी हास्पिटल जाने की हडबड़ी थी। वह बस किये जा रहा था पर रश्मि उसे प्लेट मे गरम-गरम समोसे रसोई-घर से ला लाकर डालती जा रही थी। राजीव भी नहा धो कर तैयार हो कर डायनिंग रूम मे आ गया।

''ओफ्फो माँ, मै अब और नही खा सकता।'' यह कहता हुआ समीर कुर्सी से उठ खडा हुआ फिर राजीव को देखते ही बोला-

''लो माँ। भैया भी आ गये। अब इन्हें खिलाओ मै तो चलता हूँ। आज फिर तुमने देर करा दी।'' उसे जाता देख उसकी ढीली टाई देख रश्मि ने कहा- ''अपनी टाई तो ठीक कर ले।''

यह सुन समीर राजीव के सामने खड़ा हो गया ''लो भैया, इसे ठीक कर दो।'' राजीव ने मुस्कुराने की कोशिश की। फिर उसने समीर के कालर पर उसकी टाई कस दी। समीर लगभग दौड़ता हुआ बाहर निकल गया। ''थैंक यू भैया'' कहता हुआ।

राजीव निःशब्द, टेबल के सामने एक कुर्सी खीचकर बैठ गया। रश्मि ने भी चुपचाप समोसो का एक प्लेट उसके सामने सरका दिया। राजीव मूर्तिवत बैठा ही रहा। थोड़ी ही देर में रश्मि चाय लेकर लौटी। राजीव को इस तरह खामोश बैठा देख पूछ उठी-

''क्या बात है नाश्ता क्यों नहीं करते?''

राजीव ने जैसे ही अपना उदास चेहरा रश्मि की ओर उठाया वह उसे देख कर सहम सी गयी।

''माँ! तुमने मुझे पैदा होते ही मार क्यो नहीं डाला? तुमने मुझे जन्म देते ही मेरा गला क्यों नहीं घोंट दिया, मुझे पैदा होते ही कुचल क्यों नहीं दिया।''

राजीव भर्राए कंठ से कहने लगा।

"राजू ये क्या बक रहे हो" रश्मि भौंचक हो गयी थी। "माँ मैं अपने जन्म की कहानी जान चुका हूँ। बाबू जी ने मुझे सब कुछ बता दिया है। माँ मैं अच्छी तरह से समझ चुका हूँ कि मेरे प्रति तुम्हारे मन में घृणा की भावना क्यों है।"

रश्मि की रगों में लहू जैसे बर्फ बनने लगा। उसके हाथ से चाय का कप छूट कर फर्श पर गिर पड़ा। "माँ, मैं यहाँ से जा रहा हूँ। तुम्हारी नजरों से दूर। हमेशा-हमेशा के लिए।"

राजीव कुर्सी छोड़कर उठ खड़ा हुआ।

"अब लौटकर कभी नहीं आऊँगा माँ। काश! मुझे अपना राक्षस पिता कहीं मिल जाता तो मैं उसकी गर्दन मरोड़ कर उससे पूछता कि उसने तुम्हारे साथ ..."

रश्मि वहाँ से भागकर अपने बेडरूम में चली गयी। राजीव भी वहाँ पहुँच गया। माँ के चरण छू कर बोला, "जा रहा हूँ माँ। मेरी वजह से आज तक तुम्हें जो दुख पहुँचा है यदि हो सके तो उसके लिए मुझे माफ कर देना।"

राजीव वहाँ से तेज़ कदमों से निकला। बाहर पोर्च में उसकी कार खड़ी थी जिसकी ड्राइविंग सीट पर वह जा बैठा। वह कार एक तेज हिचकोले के साथ उसे ले उड़ी।

निर्दोष राजीव घर छोड़कर चला गया। रश्मि के स्मृति पटल के सभी कपाट अब बारी-बारी से खुलने लगे जो बेगुनाह राजीव की स्मृतियों से जुड़े हुए थे। राजीव का समूचा जीवन रश्मि की आँखों में एक फिल्म-रील की तरह घूमने लगा। वह बात भी याद आयी जब पिकनिक पर राजीव ने अपनी जान की बाजी लगाकर उसके प्राणों की रक्षा की थी। राजीव ने आज तक जितना उसका ध्यान रखा है, जैसा उसे सम्मान और आदर दिया है- ऐसा व्यवहार उसे कभी किसी से मिला है? किंतु उसने स्वयं बदले में आज तक राजीव को क्या दिया? नफरत की आग, घृणा और उपेक्षा - बस यही तो। क्या कोई पुरुष बचपन में माँ-बहिन और युवावस्था में प्रेयसी या पत्नी का प्रेम हासिल करना नहीं चाहता? जिस लड़की से- मीनाक्षी से- राजीव को सच्चा प्रेम मिला उस प्रेम को भी उसने तबाह कर देना चाहा। आखिर राजीव का दोष क्या है?

बचपन से ले कर आज तक की राजीव की मासूम छवि बार-बार रश्मि की आँखों के सामने नाचने लगी। बरसों तक नारी-मन में छिपी, माँ की ममता ने आज अचानक ही अँगडाई ली और वह जाग पडी। अब रश्मि की ममता का बाँध पूरी तरह से फूट गया। "कहाँ चला गया राजू.... राजू मेरे लाल. .." रश्मि के अवरुद्ध कठ से निकला।

'आखिर राजू को मैंने जनम दिया है। वह मेरा लहू है।' ये विचार रश्मि के मन में बार-बार उठ रहे थे। वह राजीव के वियोग मे तडप उठी। इसी तड़प में तीन घटे बीत गये।

ड्राइंग रूप मे टेलीफोन की घंटी बजी। रश्मि को लगा कि यह राजीव का ही फोन है। वह फोन की ओर दौड़ी। जैसे वह राजीव को अपनी बाहों में भरनें के लिए जा रही हो। फोन पर वह जाते ही कहेगी- 'राजू, मेरे बेटे। मुझे छोड कर न जाओ। अपनी माँ को माफ कर दो। मैं तो मूर्ख हूँ ना... तुम घर चले आओ ... मेरे पास...' रश्मि ने दौड़कर फोन उठाया।

"हैलो... कौन .... राजू...?"

"नहीं माँ, मै समीर बोल रहा हूँ हास्पिटल से।" उधर से आवाज आयी।

"क्या बात है"

"माँ! एक सीरियस न्यूज़ है.. राजू भैया के बारे में।' "क्या हुआ मेरे राजू को? रश्मि एक अज्ञात भय से काँप उठी।

"उनका एक्सीडेंट हो गया है।"

"क्या..."

"हाँ माँ। कोई दो घंटे हुए उन्हें यहीं हमारे ही हास्पिटल लाया गया है।"

"उसकी हालत कैसी है?" रश्मि ने अधीरता से पूछा "फिलहाल तो बेहोश पड़े हैं। उनके कंधे के पास काफी गहरा जख्म है। बहुत खून बह चुका है। शायद उन्हें खून देने की भी जरूरत पड़े। वैसे सरदार पटेल हास्पिटल से उन्हे देखने डॉ० गुप्ता भी आ रहे हैं। हम लोग तो पूरी कोशिश कर ही रहे है कि उन्हे जल्द से जल्द होश आ जाय।"
" ..अच्छा.. मैं अभी आती हूँ.."

'हाँ आ जाओ। बाबू जी और मीनाक्षी जी भी यहाँ आ चुके हैं।

"लेकिन एक्सीडेंट हुआ कैसे?" रश्मि ने पूछ लिया। "वे शहर से बाहर खतरनाक घाटियों में ओवर स्पीड ड्राइव कर रहे थे। शायद कण्ट्रोल खो बैठे और एक चट्टान से आ टकराये। एक चश्मदीद ट्रक ड्राइवर का तो यही कहना है।" समीर ने बताया।

"अच्छा मैं आ रही हूँ।" रश्मि ने फोन रख दिया। ड्राइवर से गाड़ी निकालने को कहा। वह जल्दी से तैयार होकर पूजा-कक्ष में गयी। भगवान् की मूर्ति के सामने दो मिनट हाथ जोड़कर प्रार्थना की।

"हे प्रभु! मुझे प्रायश्चित का अवसर दो। मेरे राजू को बचा लेना। यदि उसके प्राणों की रक्षा के लिए खून देने की जरूरत पड़ी तो मैं अपने लहू की एक-एक बूँद अपने राजू के लिए दे दूँगी। मेरे श्रवण को मुझ से मत छीनना भगवन्।

राजीव महीने भर अस्पताल में पड़ा रहा। उसे खून देने की जरूरत तो पड़ी लेकिन ऐसी नौबत न आई कि उसके लिए, रश्मि का खून लेना पड़े। अंततः वह पूर्ण रूप से स्वस्थ हो गया।

आज राजीव अस्पताल से घर लौट रहा था। बिल्कुल सही अर्थों में एक नयी ज़िन्दगी लेकर। संजीव बाबू और मीनाक्षी कार द्वारा राजीव को लेकर 'रश्मि-भवन' पहुँचे। सामने पोर्च में ही रश्मि मुस्कुराती हुई स्वागत करने के लिए खड़ी थी। तीनों व्यक्ति कार से नीचे उतरे।

राजीव ने मुस्कुरा कर रश्मि की ओर देखा और बोल उठा - "माँ।"

"राजू, मेरे बेटे..।"

रश्मि ने दौड़कर राजीव को अपने गले से लगा लिया।

पास ही खड़े संजीव बाबू और मीनाक्षी मुस्कुरा रहे थे।



अभिनेत्री का पत्र

प्यारे फिल्म दर्शकों,

दो माह पहले ही मुझे संपादक जी का पत्र मिल गया था। उनका आग्रह था कि एक "लोकप्रिय फिल्म अभिनेत्री होने के नाते उनकी पत्रिका के कालम- 'दर्शक के नाम' स्तंभ के लिए मैं भी कुछ लिख कर भेंजू। सबसे पहले तो मैं संपादक जी को अनेकानेक धन्यवाद देना चाहूँगी कि उन्होंने मुझे अपने प्रशंसकों, तथा फिल्म दर्शकों से संबंध स्थापित करने का एक खूबसूरत मौका दिया। साथ ही उनसे क्षमा-याचना भी करती हूँ कि मैं उनके प्रेम पूर्वक आग्रह का पालन काफी देर से कर रही हूँ।"

दरअसल हम फिल्मी प्राणी अपने अत्यधिक व्यस्त जीवन में से चाहते हुए भी किसी अतिरिक्त कार्य के लिए समय नहीं निकाल पाते। अब देखिये न, मैं यह पत्र आपके नाम लिखने बैठी ही हूँ कि ड्राइंग रूम में रखे टेलीफोन की घंटी ने मुझे उठने के लिए विवश कर दिया।

फोन अभी-अभी रख कर आयी हूँ। एक निर्माता महोदय जिनकी फिल्म में भी मैं इन दिनों काम कर रही हूँ, अगले माह शूटिंग के लिए लगातार पन्द्रह दिनों के डेट्स माँग रहे थे। मैंने उन्हें अपनी विवशता जाहिर की तो वे इसका गलत अर्थ निकालने लगे। शायद सोच लिया हो कि अब मैं बड़ी घमंडी हो गयी हूँ। जी हाँ, जन साधारण भी तो हमारे बारे में यही गलत फहमियाँ पालने लगता है। लोग सोचने लगते हैं कि हमें जरा सी लोकप्रियता क्या हासिल हो गई मानो हम कोई साम्राज्ञी ही बन गयी। कुछ यह भी विचार पालने लगते है कि हमारे पास लाखों रुपये क्या आ गये मानो हम संसार की हर चीज खरीद सकते है। हर किसी को अपना गुलाम बनाने की कोशिश करने लगते हैं। पर मेरे प्यारे प्रशंसको, काश! मै आपको यकीन दिला सकती कि हम भी आपकी तरह एक स्वच्छन्द जीवन बिताने, सब से प्यार से मिलने एव जन के बीच जा कर उनसे हँसने-बोलने की

दिली तमन्ना रखते हैं। पर आपको यह जान कर निराशा होगी कि वक्त की कमी एवं हमारी अपार व्यस्तता ही इसमें सबसे बड़ी आड़े आती है।

आज 'सेकेंड संडे' होने के कारण से सभी स्टूडियोज बन्द हैं। आज हमारी कोई शूटिंग नहीं है। सभी यूनियन के मजदूर कर्मचारियों को हर दूसरे रविवार का बड़ी बेताबी से इंतजार रहता है। महीने में हमें एक यही तो दिन मिलता है जिस रोज हम शूटिंग पर नहीं जाते। पर यदि आउट डोर पर हों तब तो यह दिन भी हम नहीं मना पाते। आप तो हर 'सेकेंड संडे' और हर संडे की छुट्टियाँ मजे से अपने घर में बिताते होंगे। कभी कभार मनोरंजन व पिकनिक के लिए भी अपने परिवार या दोस्तों के साथ निकल पड़ते होंगे। काश, हम भी ऐसा कर पाते। जिस दिन कोई शूटिंग न हो उस दिन भी हमें घर में अपने व्यावसायिक कार्य के सिलसिले में न चाहते हुए भी काफी व्यस्त रहना पड़ जाता है। अब देखिये न, मैं यह पत्र आपके नाम लिखते हुए देख रही हूँ कि एक इम्पोर्टेड कार मेरे बंगले की सीमा के भीतर दाखिल हो रही है। निश्चय ही यह आगन्तुक किसी जरूरी काम की वजह से ही मेरे पास आ रहे होंगे।

मेरा अनुमान ठीक ही निकला। आगंतुक व्यक्ति फिल्म जगत के जाने माने निर्माता निर्देशक थे। इन्होंने कई 'सुपर हिट' फिल्में बनायी हैं। अपनी नयी फिल्म की हीरोइन के लिए वे मुझे 'साइन' कराने आये थे। मेरे पास कामों का ढेर लगा होने के बावजूद भी मैं उन्हें इनकार न कर सकी। इनकार करने की गुंजाइश थी भी कहाँ? जिस धंधे की हम रोटी खाते है यदि उसी क्षेत्र के महारथियों को हम नाराज करने लगें तो हमारी खैर नहीं। जल में रहकर मगर से बैर क्यों करें।

निर्माता महोदय अभी-अभी मेरे पास से उठ कर गये हैं। कोई एक घंटे का वक्त उन्होंने मेरा ले लिया। अपनी फिल्म का 'स्क्रिप्ट' भी वे मेरे पास छोड़ गये हैं। आपका पत्र पूरा करने के बाद मुझे इस नये स्क्रिप्ट से जूझना पड़ेगा। कभी-कभी लगता है कि हम इंसान नहीं, काम करने की कोई मशीन हैं। पर मशीन को भी तो आराम करने की जरूरत पड़ती है। लगातार चलते-चलते वह गरम नहीं हो जायगी। पर हमें 'गरम' होकर भी 'ठंडे' होने का अभिनय रोज ही करना पड़ता है।

प्रसंगवश मुझे पिछले माह की एक बात याद आ गयी। मै शिमले मे एक माह की आउटडोर शूटिंग करके लौटी थी। लगातार काम की थकान ने मुझे यहाँ आते ही बीमार बना दिया। मेरा शरीर तेज बुखार से उस दिन तप रहा था। अंगो के जोड-जोड में भी उस दिन अत्यधिक पीड़ा थी। पर दुर्भाग्य से 'नटराज' मे उस दिन मेरी एक अन्य फिल्म के शूटिंग की 'डेट' तय थी। स्वास्थ्य और मन दोनो ही घर से निकलने की इजाजत नही दे रहे थे। डाक्टर भी मुझे 'चेक' करके और पूर्णरूपेण विश्राम करने की हिदायत देकर चले गये थे। मैं विस्तर मे पडी थी। सेक्रेटरी ने तभी मुझे आकर बताया कि डायरेक्टर साहब ने मुझे जल्दी ही 'सेट' पर पहुँचने के लिए फोन किया है। मैने सेक्रेटरी से कहा कि- 'कह दो मेरी तबीयत ठीक नहीं है। मैं आज शूटिंग नही कर सकूँगी।' इसे सुनकर सेक्रेटरी कहने लगा कि 'मेम साब, निर्देशक महोदय आपको फोन पर बुला रहे है।' अंततः मुझे फोन पर डायरेक्टर से बात करनी ही पड़ी। फोन उठाते ही वे रोना रोने लगे कि यदि मैं आज शूटिंग न कर सकी तो उनके लाखों का नुकसान हो जायगा। यूनिट के सारे लोग मेरी ही प्रतीक्षा कर रहे है, मै शीघ्र ही स्टूडियो पहुँचूँ आदि। निर्देशक महोदय की शिकायते वाजिब थी। किसी कलाकार के 'सेट' पर देर मे पहुँचने मे ही निर्माता को हजारो का नुकसान हो जाता है। फिर तो कलाकार की अनुपस्थिति से बेचारे निर्माता के घाटे का हिसाब ही न पूछिये।

आवश्यक कलाकार के न पहुँचने से हजारों, लाखों के बनाये गये सेट व्यर्थ हो जाते हैं। और फिर स्टूडियो के किराये भी तो आसमान पार कर गये है।

अंततः उस दिन मुझे स्टूडियो जाना ही पडा। मै ज्वर से तप रही थी पर लगातार मैं दिन भर शूटिंग करती रही। बिना अपने चेहरे पर एक शिकन तक लाये मैं 'सेट' पर आने जाने वाले लोगों और अपने प्रशंसकों से मिलती रही। उस शाम में जब स्टूडियो से घर पहुँची तो सारा बदन जैसे टूट कर बिस्तर पर बिखर गया था। हठात् उस दिन मेरे मस्तिष्क में इस विचार ने जन्म लिया था कि काश! मैं फिल्म अभिनेत्री न होती।

इस घटना के कुछ ही दिनो बाद मैंने एक फिल्मी अखबार में यह भी पढा कि - 'अभिनेत्री निशा (यानी कि मै) सेट पर हमेशा देर से

आती है जिसकी वजह से उसके निर्माताओं को लाखों का घाटा उठाना पड़ रहा है। उसकी इस बुरी आदत के कारण निर्देशक उससे कतराने लगे है, आदि आदि।

प्यारे फिल्म दर्शको, अब आप ही बताइये कि इसमें मेरी गलती कितनी है। कौन कलाकार चाहेगा कि उसकी वजह से किसी फिल्म निर्माता को हानि हो। इससे तो इंडस्ट्री में अपनी ही साख खराब होती है। यदि आप यकीन करें तो एक बात आपको मैं और बताऊँगी और वह यह कि यदि कभी मेरी वजह से किसी निर्माता को आर्थिक हानि हुई है तो उस राशि का भुगतान मैंने स्वयं किया है: इसके लिए मेरे प्रोड्यूसर्स गवाह हैं।

प्यारे प्रशंसको, आज इस पत्रिका के माध्यम से आपसे बातें करते हुए सचमुच मुझे बड़ी प्रसन्नता हो रही है। आज सुबह से ही मैं बड़ी प्रसन्नचित्त हूँ। मेरा निवासस्थान यहाँ जुहू बिच में सागर के तट पर ही है। मैं अपने भवन की खुली बालकनी पर बैठे हुए आपको पत्र लिख रही हूँ। मेरी आँखों के सामने विशाल सागर किलकारियाँ मार रहा है। आकाश खुला हुआ और स्वच्छ है। दिसम्बर की सुहानी धूप चारों ओर फैली हुई है। ऊपर से आज शूटिंग के झंझट से मुक्त हूँ। इस सुन्दर मौसम में आपको पत्र लिखते हुए ऐसा महसूस हो रहा है जैसे मैं सचमुच आपके बीच ही पहुँच गयी हूँ।

अभी-अभी एक सेवक आपके हजारों पत्रों का पुलिंदा मेरे सामने टेबल पर रख गया है। मैं कलम रखकर उनमें से कुछ पत्रों को देखने लगती हूँ। कुछ प्रशंसको ने तो मेरी तारीफों के पुल बाँध रखे हैं इस तरह के पत्रों को पढ़कर मुझे कितनी प्रसन्नता होती है - इसे मैं अपनी कलम से व्यक्त नहीं कर सकती। कौन व्यक्ति प्रशंसा का प्यासा नहीं होता? आपके इन पत्रों को पढ़कर मुझे बड़ा उत्साह मिलता है। ये लीजिए, एक प्रशंसक के स्नेह युक्त पत्र को पढ़कर तो मेरी आँखें भी खुशी से भीग गयी। सच, आपके इस ढेर सारे प्यार को पा कर मैं खुशी से फूली नहीं समाती। ईश्वर से हमेशा यही प्रार्थना करती हूँ कि आपका यह प्यार हमेशा मुझे मिलता रहे। पर यह न समझिये कि मैं अपनी आलोचना करने वालों से घृणा करती हूँ। एक कलाकार की सच्ची कसौटी तो तभी होती है जब वह अपनी आलोचना बर्दाश्त कर सके और अपनी खामियों को पूरा कर सके। संभवत यह बात एक कलाकार

के लिए ही नही बल्कि हर एक इसान के लिए भी लागू होती है। वैसे मानव प्रवृति ही ऐसी होती है कि वह अपनी आलोचना या बुराई सुनना पसंद नही करता।

जब आप किसी फिल्म में मेरे अभिनय की आलोचना करते है तो मै उसे एक चुनौती के रूप मे लेने का प्रयास करती हूँ और भविष्य में अपनी गलतियाँ सुधारने का भी प्रयत्न करती हूँ। इस तरह से आपकी आलोचना से निश्चय ही मुझे अपने अभिनय कला को मॉजने में बडी सहायता मिलती है।

पर आप लोगो के बीच से ही हमें अवसर ही बड़े-अनाम-शनाप पत्र भी मिलते हैं। इन्हीं तरह के पत्रो को पढ़कर बड़ी झुँझलाहट हो आती है। ये देखिये एक महाशय का पत्र- इन्होंने मुझे संबोधित किया है 'मेरी मालिका-ए-आलिया-निशा...।' एक और सज्जन का पत्र देखिये। सज्जन नहीं बल्कि दुर्जन कहिए। इन्होंने मुझे जो सबोधन लिया है उसे पढकर तो कोई भी शरीफ लडकी अपने आपे से बाहर हो सकती है। इन्होंने मुझे काफी लम्बा सा संबोधन लिख रखा है- 'हिन्दुस्तान की राष्ट्रवधू डीयर डार्लिंग निशा' इन पत्रो के ढेर मे अभी मुझे कई ऐसे पत्र मिलेंगे जिनमे इसी तरह के स्तरहीन, अश्लील एवं बेकार की बाते लिखी होंगी। किसी ने मुझसे शादी तक करने की इच्छा व्यक्त की होगी। ऐसे पत्रो के ढेर मुझे लगभग रोज ही मिलते हैं। मेरे दिल की रानी, मेरी धड़कन, मेरी महजबी, मेरे सपनों की शहजादी और भी तरह-तरह के न जाने कितने रंगीन संबोधन मेरे लिए लिखे होते हैं। कहना न होगा कि ज्यादातर ऐसे पत्र मुझे देश के युवावर्ग से ही प्राप्त होते हैं। इन पत्रो को पढ़कर मैं क्षुब्ध हो उठती हूँ। क्षुब्धता के साथ एक चिंतायुक्त गभीरता भी मुझे घेर लेती है। सोचने लगती हूँ कि क्या हमारे देश का युवा वर्ग इतना ही उच्छृंखल और गैरजिम्मेदार हो गया है? इस फिल्म अभिनेत्रियों के लिए इतना ही सम्मान है- देश के भावी कर्णधारो के मन में! क्या हम सचमुच ही देश की राष्ट्रवधुएँ हैं?

एक जमाना था जब फिल्मों में काम करने के लिए वेश्याएँ तक इनकार किया करती थीं। पर आज तो इस क्षेत्र में सभ्य एवं सुसंस्कृत घराने की शरीफ लड़कियाँ भी प्रवेश कर रही हैं। जब उन्हें इस तरह की बाते सुनने को मिलेंगी, उन पर इस तरह की अश्लील फब्तियाँ कसी जायेगी तो क्या वे इसे सहन कर सकेंगी? आखिर हम भी तो

आम इंसानों की तरह हाड़ मांस के ही बने हैं। हममें कोई अतिरिक्त सहनशीलता कहाँ से आयेगी?

कभी-कभी स्कूल कालेज की लड़कियों के भी बड़े ही बेतुके पत्र मुझे मिल जाते हैं। एक बार एक मैट्रिक की स्कूली लड़की ने मुझे लिखा- "डीयर निशा आंटी- पिछले दिनों मेरी टेस्ट परीक्षा हुई। परीक्षा में किसी एक फेवरेट नेशनल हीरो या हीरोइन पर ऐसे (निबंध) लिखना था। मैंने आपके लाइफ के ऊपर निबंध लिखा। उस निबंध की तैयारी के लिए मैंने खूब परिश्रम किया था। जहाँ से भी आपके बारे में जानकारी मिल सकती थी- मैंने सारा मैटर कलेक्ट किया। पर जब मुझे अपना उत्तर पेपर मिला तो मैं अवाक रह गई। 'मैडम' ने मेरा निबंध पूरा काट दिया था और मुझे 'जीरो' नम्बर थमा दिया था। यही नहीं, मैडम ने मेरा क्लास में जोरदार 'इनशल्ट' भी किया। क्लास की सारी लड़कियाँ मुझ पर हँसती रहीं। यह सब क्यों हुआ? मेरी समझ में अभी तक नहीं आया। मेरी फेवरेट हीरोइन तो आप ही हैं। क्या आप पर ऐसे लिखकर मैंने कोई गलती की थी?"

उस लड़की का पत्र पढ़कर मुझे खूब हँसी आई। पर हँसते-हँसते मेरा मन काफी गंभीर हो गया। उस नासमझ लड़की की नादानी पर मुझे तरस आया। क्या 'फेवरेट नेशनल हीरोइन' का मतलब फिल्म की हीरोइन से होता है, मैं चिंतित मन से सोचने बैठ गयी। हे भगवान्, हमारे देश की भावी पीढ़ी का क्या होगा। क्या आज की पीढ़ी को यह भी नहीं मालूम कि हमारे देश के इतिहास में महापुरुषों और वीरांगनाओं की कतारें लगी हुई हैं। इन त्यागी पुरुषों, वीरांगना नारियों और कर्मठ व्यक्तियों के सामने मेरी क्या हस्ती? मैं तो इनकी चरण धूलि भी नहीं।

अक्सर लोग- आज हमारी व्यक्तिगत जिन्दगी के भी बारे में तरह-तरह के उलजलूल सवाल पूछते रहते हैं? मसलन कोई पूछता है "क्या आप अपने वास्तविक जीवन में भी किसी हीरो से प्रेम करती हैं?" "आप शादी किससे करना चाहती हैं?" "आप शादी कब कर रही हैं?" आदि।

इन व्यक्तिगत प्रश्नों को पूछ कर आपको क्या मिलता है? सच तो यह है कि ऐसे व्यक्तिगत प्रश्नों को सुनकर हमें बड़ा ही कोफ्त होता है। अपनी शादी की बात सुनकर लजा जाना लड़कियों का स्वभाव होता है पर लगता है मैं इसे बार-बार सुनकर निर्लज्ज सी

हो गयी हूँ। जब मुझे अपना मनपसंद वर मिल जायगा तो मै भी व्याह कर लूँगी। बस, आपके द्वारा हमेशा पूछे जाने वाले इस सवाल का मेरे पास यही जबाव है।

मै क्या-क्या तमन्नाएँ ले कर फिल्म जगत् मे आयी थी। सोचा था धन और सम्मान तो मेरे हक मे आयेगे ही साथ-ही-साथ मै कल फिल्मो के माध्यम से जनता का मनोरजन करूँगी। मेरा एक दृढ उद्देश्य भी था- कि हमेशा मै आदर्श फिल्मों में काम करूँगी। पर मुझे गहरा दुख है कि दर्शको की तथाकथित रुचियों के कारण मै अपने उद्देश्य मे पूर्णरूपेण सफल न हो सका। मेरे निर्देशक मुझसे वही काम लेते है जो उनकी दृष्टि में दर्शको को पसद है। समाज सुधारक एवं राष्ट्र को नयी जागृति देने वाली कुछेक गिनी चुनी फिल्मो मे मैंने काम किया भी। पर वे बाक्स आफिस पर बुरी तरह से असफल रही। इन आदर्श फिल्मो के लिए निर्माता को राष्ट्रपति पुरस्कार तथा राष्ट्रीय सम्मान तो मिले पर बिचारे को लाखों की आर्थिक हानि उठानी पड़ी। इन फिल्मो की असफलता से हमारी 'माँग' पर भी बुरा असर पड़ने लगा था। विवश होकर मैंने ऐसी फिल्में भी 'साइन' करनी शुरू कर दी जिनमे 'हिट फिल्मों' के मसाले ठूँस-ठूँस कर भरे गये थ। और आश्चर्य यह कि मेरी इस तरह की सभी 'फार्मूला फिल्मे' बाक्स आफिस पर जोरदार सफल हुई। सफलता किसे पसंद नहीं? पर सच मानिये, अपनी इस सफलता से मुझे सच्चा सुख नहीं मिला। मन में अनेक टीसे उठती है कि आखिर इन बेसिर-पैर की फिल्मों में काम करने से फायदा? हाँ, फायदा है। इन बेसिर-पैर की फिल्मो को आप टिकिट खिडकी पर खूब सफल बना देते है। इस सफलता से हमारी 'माँगे' बढती हैं। माँगें बढ़ने से हमे लाखों रुपये मिलते हैं। दिन दूनी रात चौगुनी हमारी कीमतें बढ़ती जाती हैं। अपार धन हमारे घर में आने लगता है। हमारी लोकप्रियता आसमान पर पहुँचने लगती है। हमारे दाँये बाँये, आगे-पीछे प्रशंसको की भीड़ बढ़ने लगती है। और हम फिल्मी कलाकार अपनी इस महान् सफलता पर इतरा उठते हैं।

पर काश, आपको यह ज्ञात हो पाता कि हमें, कम-से-कम मुझे, आज की अपनी इस सफलता पर जरा भी खुशी नहीं है। यह खुशी मुझे तब होती जब आपने मेरी अच्छा और आदर्श फिल्मों को स्वीकारा होता। जब आपने मेरा 'गांधी का देश' जैसी फिल्मों को सफल बनाया होता। इस फिल्म के जिक्र से अनेकों कटु-स्मृतियाँ मस्तिष्क में उभर

आयी है। इस फिल्म के निर्माता ने जब मुझे इसकी कहानी सुनायी थी तो मैं अपना रोल सुनकर खुशी से नाच उठी थी। बड़े ही उत्साह और मनोयोग से मैंने इस फिल्म में काम किया। इस फिल्म में मैंने एक ब्राह्मण लड़की का रोल किया था जो अंत में हरिजन युवक से विवाह कर लेती है। जब यह फिल्म रीलिज हुई तो देश के कई भागों में काफी बखेड़ा हो गया। धर्म के ठेकेदार लोग निर्माता की हत्या करने तक की धमकी देने लगे। हम कलाकारों पर भी लोग कीचड़ उछालने लगे। कुछ जगहों पर तो जिस सिनेमा घर में यह फिल्म प्रदर्शित की गयी, उसे जला कर राख कर दिया गया। फिल्म तो बुरी तरह पिटी ही हम सब भी तथाकथित उच्च वर्ग के लोगों के कटु आलोचना के शिकार हुए। इस घटना के बाद मैं जहाँ भी जाती, लोग मुझे घेर कर तरह-तरह के सवाल करने लगते। भीड़ मे किसी मनचले के मुंह से मुझे यह भी सुनना पड जाता है - 'हरिजन प्रेमिका पधारी हुई है।' मैं अपनी उस फिल्म की घोर असफलता एवं उपेक्षा से सच मानिये गांधी जी की फोटो के सामने फूट-फूट कर रो पड़ती थी। मैंने अपना सिर पटक कर गांधी की फोटो से कहा था - ''हाय रे गांधी - क्या यही तेरा देश है? क्या तूने इसी भारत की कल्पना की थी? क्या तुमने इसी राम राज्य की कल्पना की थी? आखिर तुमने हरिजनोद्धार का नारा क्यों लगाया था? तुझे क्या पड़ी थी अपने देश की सुध लेने की? क्या इसके लिए धर्म के ठेकेदार ही काफी नहीं हैं?''

आज आपने मुझे लोकप्रियता की शिखर पर पहुँचा दिया है। पर सच मानिये, इस 'टाप' पर पहुँचने के लिए मैंने अनेक मानसिक संघर्ष किये हैं। अपने अनेक सिद्धान्तों की मुझे हत्या करनी पड़ी है। आपके मनोरंजन के लिए मुझे अपनी भावनाओं को दबाना पड़ा है। आपकी रुचियों की वजह से मुझे अपने आदर्शों को कुचलना पड़ा है। आपकी माँगों की वजह से फिल्मों में मुझे अपनी खुली टाँगों तक का प्रदर्शन करना पड़ा है।

हमें या फिल्म निर्माता को अपने मन से ही यह सब करने का कोई शौक नहीं होता। यह सब आप चाहते हैं। हम जानते हैं, यदि हम यह सब नहीं करेंगे तो आप हमारी फिल्मों को असफल कर देंगे। असफलता कौन पसंद करता है? और वह भी जहाँ लाखों-करोड़ों के घाटे का प्रश्न हो। कोई बात नहीं चलिये हम अपने शरीर का प्रदर्शन कर लेंगी। भारतीय नारी हो कर भी हम बिकनी सूट पहन

लेगे। आपके सामने ही हम निर्लज्ज हो कर स्वीमिंग पूल पर कूद पडेगे और नील स्वच्छ जल मे विहार करते हुए हम अपना अंग प्रत्यंग आपको विभिन्न कोणों मे दिखाने का पूरा प्रयत्न भी करेंगे। सेंसर से भी किसी तरह फिल्म पास करवाने का जिम्मा हमारा रहा। पर हम आपका मनोरंजन करने से चूकेंगे नही। आखिर हम फिल्म वाले ठहरे। इसी धंधे से हमे पैसा कमाना है। पैसो से ही सबको रोटी मिलती है। रोटी पहले, आदर्शवादी सिद्धांत बाद मे। वैसे भी आदर्शवाद पर चलने की हमने बहुतेरी कोशिश की पर आपने हमे कही का न रख छोडा। महान् फिल्मे बनाने पर आपने हमे महान् असफलता प्रदान की। सो आप जैसी फिल्म चाहेगे वैसी हम आपको देगे।

फिल्म-निर्माण एक व्यापार भी तो है। और व्यापार का यह ठोस सिद्धांत है कि ग्राहक जिस माल को पसद करता है वही माल व्यापारी उसे देगा। आपकी फरमाइशें पूरी होती रहेंगी आप निश्चिन्त रहिये। पर आपकी फरमाइशो की भी कोई सीमा तो होनी चाहिए। जब फिल्मो मे हम आपको अपनी खुली टाँगें और वक्ष दिखा देते हैं तब आप और भी आगे बढ़ना चाहते है। फिर तो निर्माता को मजबूर हो कर 'सेक्स एजूकेशन' का बहाना ले कर काफी आगे आना पडता है। और इस तरह की फिल्मों के प्रसव-दृश्य के बहाने क्या कुछ नही फिल्मा लिया जाता।

अब आप ही कहे कि जिस देश की फिल्मों में यौनांगों का खुला-प्रदर्शन किया जायेगा तो वहाँ की युवा पीढ़ी पर इसका क्या असर होगा? मैंने माना कि सेक्स शिक्षा एक मनोवैज्ञानिक आवश्यकता है पर हमारे निर्माता इसे शिक्षात्मक दृष्टि से बनाते कहाँ हैं? वे तो मात्र जब अपनी जेबें भरने के लिए ही ऐसी फिल्मों का निर्माण करते हैं। इन फिल्मों को देख कर युवा पीढ़ी उत्तेजित होती है और समाज मे अनैतिकता की लहरें फैलने लगती हैं।

लीजिए, मैं बहकती हुई कहाँ चली आयी। इस बीच मैंने आपके सर कितने सारे दोष डाल दिये और स्वयं साफ बच निकलती रही। पर प्यारे दर्शको, सच मानिये यदि आप अपनी रुचि परिमार्जित कर लें तो हम आपको हमेशा अच्छी और आदर्श फिल्मे देते रहेंगे। मेरा यह विचार कतई नही कि अच्छी फिल्मों के दर्शक यहाँ हैं ही नही। हैं, पर इनका अल्प वर्ग फिल्म को अपेक्षित सफलता दिलाने में सहायक

नहीं हो पाता। विवश होकर निर्माता इधर उधर के हिट होने के नटक फिल्मों में डाल देता है।

मैं आज फिल्म दर्शकों से विशेष कर युवक-युवतियों से वादा लेना चाहती हूँ कि वे हमेशा अच्छी एवं साफ सुथरी फिल्में देखेंगे यदि आप अपना वादा निभाते हैं तो मेरा भी वादा रहा कि मैं हमेशा उच्च कोटि की साहित्यिक फिल्मों में ही काम करूँगी। मेरे अभिनय से आपको शिकायत हो सकेगी पर फिल्म की कहानी से आपको कोई शिकायत नहीं होगी।

मैंने आपको पत्र प्रारंभ करने से पहले सोचा था कि आज आपसे अपने पत्र में खूब प्यारी-प्यारी बातें करूँगी। फिल्मों का तो जिक्र ही नहीं छेड़ूँगी। पर देखिये न, फिल्मी जीवों को ऐसे फिल्मी बातें करने की बीमारी ही होती है। खैर, हम गैर फिल्मी बातें वक्त मिला तो कभी और करेंगे। तब आप हम काफी मीठी-मीठी बातें करेंगे, खूब गप्पें लड़ायेंगे पर मैंने कहा न वक्त मिला तो। आज मेरे पास वह सब कुछ है, जिसके एक आम इंसान सपने देखता है। शानदार समुद्री तट पर बंगला, विदेशी गाड़ियाँ, अपार दौलत, मान-सम्मान, प्रशंसकों की भीड़ और आप सब का ढेर सारा प्यार - सभी कुछ तो है मेरे पास। पर यदि किसी चीज की कमी है तो वास्तव में वक्त की। काश, मुझे दूसरों का फालतू वक्त मोल ही मिल जाता। समय की इस कमी ने ही हमारे जीवन को मशीन बना दिया है। इसी कमी ने हमें बदनाम कर दिया है। समय की कमी की वजह से ही हम 'घमंडी' हो गयी हैं 'वादा खिलाफी' भी कर बैठते हैं।

अच्छा प्यारे फिल्मी दर्शकों, अब अपनी निशा को इजाजत दीजिए। अंत में आप सब को मेरी ओर से नये वर्ष की ढेर सारी शुभकामनाएँ।

आपकी –
निशा



स्नेह-सरिता

नयी बहू के घर आते ही सास ने उसके कान भरने शुरू कर दिये थे।

''देखो बहू, बाड़ी वाला जो कमरा है उसके अंदर भूलकर भी कभी मत जाना। उस कमरे में एक खतरनाक पागल आदमी रहता है।''

बहू का मन हुआ कि सास से पूछे - ''कौन पागल आदमी?'' किंतु नयी नवेली आयी बहू ने ''अच्छा माँ जी'' कह कर विनम्रता से सास की हिदायत स्वीकार कर ली थी।

टैप लगा हुआ बाथरूम घर के पिछवाड़े स्थित बाड़ी मे ही बना हुआ था। जैसा कि आमतौर पर छत्तीसगढ़ के संपन्न घरो मे गांवो मे होता है। सरिता को प्रतिदिन बाड़ी में स्थित बाथरूम नहाने धोने के लिए तो जाना ही पड़ता था, कभी - कभी हरी धनिया पत्ती या कुछ हरी मिर्च तोड़ लेने भी वह एक-दो बार बाड़ी चली जाती थी। जब भी सरिता बाड़ी आती-जाती उसकी नजर 'पागलखाने' की ओर अनायास ही पड़ जाती। उस कमरे का दरवाजा चौबीसों घंटे बंद रहता। यद्यपि ताला न लगा होता। उस कमरे की ओर देखते ही सरिता को फिल्म 'खिलौना' के पागल संजीव कुमार की याद हो आती थी जो हमेशा इसी तरह से एक कमरे मे बंद होता था।

फिर एक दिन सरिता ने उस पागल आदमी को देख ही लिया। घर का आम मुख्तार (नौकर - प्रमुख) मंगल उसे साथ लेकर आँगन में आया जहाँ जमीन पर उसे बिठा दिया गया। गाँव का नाई उसकी हजामत बनाने लगा। हर दो हफ्ते मे इसी तरह उसकी बढी हुई दाढी भी बनवा दी जाती। हजामत और दाढ़ी बनने के बाद जब वह पागल खड़ा हुआ तब सरिता ने रसोई घर की खिड़की से उसे देखा। वह एक लंबे कद और गोरे रंग का सुडौल युवक था।

दरअसल यह पागल आदमी सरिता का जेठ था। उसका नाम था मुकेश। मुकेश जन्मजात पागल न था। वह इंजीनियरिंग कालेज मे बी० ई० के अंतिम वर्ष में पढ़ रहा था जब उसे पागलपन के दौरे पड़ने

शुरू हुए लोग तो देखा [illegible]
पागल बनाने में उसकी [illegible]
महिला का [illegible] राजेश मुकेश [illegible]
मिश्र ने पहली पत्नी का [illegible] और [illegible]
थी। मुकेश जब चार साल का बालक ही था, [illegible]
आयी। रामचरण की दूसरी पत्नी जमुना देवी [illegible]
बाद ही राजेश को जन्म दिया था। इस तरह से मुकेश, [illegible]
राजेश से उम्र में पांच साल बड़ा था।

जब मुकेश कक्षा १०वीं में था और राजेश कक्षा [illegible] पिता पं० रामचरण मिश्र का भी देहान्त हो गया। [illegible] जमुना देवी की निगरानी और संरक्षण में पलने-बढ़ने लगे। मुकेश शुरू से ही पढ़ाई में तेज था। वह कक्षा १२वीं प्रथम श्रेणी में पास [illegible] फिर पी० ई० टी० की परीक्षा भी उसने पास कर ली [illegible] बिलासपुर, मध्य प्रदेश के इंजीनियरिंग कालेज में [illegible] कालेज के ही हॉस्टल में रहता था। कालेज में वह [illegible] लगा और फाइनल ईयर में पहुँचने के बाद उसे पागलपन के दौरे पड़ने लगे। अचानक चिल्ला-चिल्ला कर अनाप-शनाप बकने लगता था। [illegible] गूँगे की तरह खामोश हो जाता और घंटों तक [illegible] रहता। चुपचाप दूसरों की ओर टुकुर-टुकुर देखता रहता। अन्ततः इंजीनियरिंग कालेज के प्राचार्य ने मुकेश को स्थायी तौर पर छुट्टी दे दी और उसे हॉस्टल के वार्डन के साथ उसके गाँव नवागांव पहुँचवा दिया। वार्डन ने जमुना देवी को मुकेश का सारा हाल कह सुनाया और सलाह दे आया कि उसे किसी मनोरोग विशेषज्ञ को दिखाया जाय।

जमुना देवी ने मुकेश को किसी डाक्टर को न दिखाया। घर के पिछवाड़े बाड़ी में जो कमरा था वहीं स्थायी रूप से उसका खाट-बिस्तर लगवा दिया। बाड़ी वाले कमरे में खेती के औजार, हल, भैंसा-बैलगाड़ी के सामान आदि भी रखे जाते थे। स्वयं जमुना मुकेश को दोनों जून भोजन की थाली वहाँ जा कर सरका आती। कभी मंगल तो कभी घर का कोई और नौकर मुकेश को बाड़ी स्थित कुँए पर ले जाकर नहला-धुला देते। फिर उसके कमरे में ले जाकर उसके कपड़े बदल देते।

स्वर्गीय रामचरण मिश्र जमींदार थे। तीन सौ एकड़ से ऊपर उनकी खेती की जमीन थी सभी खेतों में ट्यूबवेल से सिंचाई का पानी पहुँचने

का साधन था। सालाना हजारा क्विंटल गहूँ, चावल व दलहन की उपज तो होती ही थी इनके अलावा आम, अमरूद, कटहल व संतरो के वडे-बडे बाग थे। विभिन्न प्रकार की साग-सब्जी की बाडियाँ थी। स्वर्गीय मिश्र जी की कृषि-व्यवसाय से वार्षिक आय पॉच लाख रुपयो से ऊपर ही थी। छत्तीसगढ़ (मध्य प्रदेश) बिलासपुर जिले के ग्राम नवापारा मे उनकी शानदार हवेली थी। ग्राम नवापारा, गनियारी के पास तखतपुर विकास-खड मे स्थित है। कहना न होगा कि मिश्र जी के देहात के बाद उनकी सारी जमीन-जायदाद की हकदार उनकी विधवा पत्नी यमुना देवी बनी। जमुना देवी चाहती थी कि उनकी सारी जायदाद का वारिस उनका पुत्र राजेश बने। सौतेले पुत्र मुकेश को हिस्सा-बॉट न देना पडे। लोग कहते है कि इसीलिए जमुना देवी चाहती थी कि मुकेश पागल ही बना रहे।

मुकेश सिविल इंजीनिरिंग के फाइनल ईयर मे पढ रहा था कि वह पागल हो गया। उसके छोटे भाई राजेश ने बिलासपुर के द्वारका प्रसाद 'विप्र' महाविद्यालय से द्वितीय श्रेणी में एम० काम० पास किया। फिर एक साल उसने गाँव में घर पर ही रह कर खेती की। साल भर मे उसने अनुभव किया कि केवल खेती करने से तो वह गाँव मे बोर होता है। अत. उसने कोई व्यापार करने का विचार किया। व्यापार शुरू करने के लिए धन की कमी तो थी नही। दौड़धूप करके उसने तखतपुर में कपडे की एक अच्छी सी बड़ी दुकान खोल ली - मिश्रा क्लाथ स्टोर। रहता वह गाँव मे ही था। घर मे जीप व मोटरसायकिल दोनो थे। प्रतिदिन सुबह चाय नाश्ते के बाद वह मोटरसायकिल से तखतपुर, अपनी दुकान चला जाता। रात दुकान बंद करते लौटता और घर आ कर ही भोजन करता। धीरे-धीरे उसका व्यापार भी अच्छा जम गया था। फिर सरिता के साथ उसका विवाह हो गया। सरिता ने एक दिन अपने पति से पूछा - "क्यो जी, अपने बडे भाई साहब को उस काल कोठरी में क्यो रखा जाता है?"

"तो उस पागल को कहाँ रखे?" राजेश ने कहा।

"उन्हें घर मे ही एक कमरा दे दिया जाय तो क्या हर्ज है? बाडी वाला कमरा तो ठीक नही है।

"तुम्हें कैसे मालूम कि वह कमरा ठीक नही है?"

"मै कल स्वयं भोजन की थाली लेकर उन्हे देने गई थी। लगता है

कई दिनों से उस कमरे की सफाई भी नहीं हुई है कि ऊपर से [illegible] [illegible] जाल और [illegible] का आवास बने हुए हैं।

"इन बातों से तुम्हें या हमें क्या? मुकेश की देखभाल की जिम्मेदारी गाँव पर है। वही ये सब जानें।"

"लेकिन बड़े भाई साहब भी परिवार के एक सदस्य हैं। पागल हैं तो क्या हुआ। आखिर इनकी उचित देखरेख करना भी हम सबका एक कर्तव्य बनता है।"

गजेश को अपनी दुकान पहुँचने की जल्दी थी। वह अपने कपड़े बदल कर व जूते-मोजे पहन कर उठा और मोटरसाइकिल निकालकर चला गया। ऐसे भी उसने अपने बड़े भाई की कभी सुध न ली थी।

जमुना इन दिनों गाँव के कुछ स्त्री-पुरुषों के साथ अमरकंटक, चित्रकूट मैहर आदि तीर्थस्थानों की यात्रा पर गयी हुई थी। जाते समय वह अपनी बहू सरिता को हिदायत दे गई थी कि वह दोनों जून किसी नौकर के हाथ उस पागल को भोजन भेजवा दिया करेगी।

उस दिन दोपहर के बारह बज गये। घर में कोई नौकर चाकर नहीं था। सरिता एक बजे तक किसी नौकर के आने की प्रतीक्षा करती रही। जब कोई भी न आया तो उसने अपने मन में विचार किया कि वह स्वयं ही अपने जेठ को भोजन देने जायगी। थाली में उसने तीन चार पराठे रखे। दो तरह की सब्जियाँ, छौंकी हुई दाल, नींबू का आचार सुगंधित दुबराज चावल का भात और ऊपर से स्टील की बड़ी कटोरी मे खीर। भोजन की थाली ले कर वह बाड़ी स्थित 'पागलखाने' के दरवाजे के सामने जा खड़ी हुई। हिम्मत करके उसने दरवाजे का साँकल निकाला और दरवाजा खोल लिया। थोड़ी दूर पर सामने की खाट पर बिछे अपने बिस्तर पर मुकेश चुपचाप बैठा हुआ था। पायजामा - कुर्ता पहने, बढ़ी हुई दाढ़ी। टुकुर-टुकुर खामोशी के साथ निहारने लगा। वहीं एक बिना हैंडल वाली कुर्सी पड़ी थी जिसके ऊपर सरिता ने भोजन की थाली रख दी। मुस्कुरा कर उसने जेठ की ओर देखा और दोनों हाथ जोड़कर बोल उठी -

"प्रणाम भैया।"

न जाने कैसे मुकेश ने भी उसके सामने अपने दोनों हाथ जोड़ दिये सरिता मुस्कराई

"मैं आपकी बहू हूँ। आपके छोटे भाई की पत्नी। मेरा नाम सरिता है।" सरिता ने अपना परिचय दिया। मुकेश भी मुस्कुरा उठा।

'लीजिए, खाना खा लें।" सरिता ने विनम्रता से कहा

मुकेश अपने बिस्तर से उठा। वहाँ एक कोने से रखे घड़े से पानी ले कर वह अपने हाथ धो आया। फिर भोजन की थाली ले कर चुपचाप जमीन पर बैठ गया और खाने लगा। मुकेश का भोजन समाप्त हो रहा था कि तभी सरिता ने रसोई घर से कुछ और भोजन सामग्री ला कर उसे परोस दिया। जब वह तीसरी बार भी उसे भोजन परोसने लगी तब मुकेश ने हाथ के इशारे से उसे मना कर दिया। संकेत था कि अब वह तृप्त हो चुका है, अब और भोजन नहीं चाहिए। तब सरिता सोचने लगी - "तो क्या सास जी (जमुना देवी) इन्हें हर रोज आधा पेट ही भोजन कराती हैं। बिचारे कितने भूखे थे।

अब सरिता स्वयं ही प्रतिदिन मुकेश को दोनों जून भोजन करा आती।

एक दिन की बात है। सरिता मुकेश के लिए भोजन की थाली ले कर गयी। मुकेश ने प्रतिदिन की तरह अपना हाथ धोया और जमीन पर बैठकर भोजन करने लगा। यूँ तो सरिता मुकेश को थाली देकर आँगन मे आ बैठती थी। बाद मे दुबारा परोसने चली जाती थी। किन्तु आज वह न जाने क्यों जमीन पर ही बैठ गयी। मुकेश भोजन कर रहा था। सरिता उसके सामने बैठी मुस्कराती हुई उसे देख रही थी। ----------
और तभी अचानक सरिता के मुँह से एक जोरदार डरावनी चीख निकल गयी। दरअसल छप्पर की ओर से एक लंबा काला भुजंग (साँप) ठीक मुकेश के बिस्तर के ऊपर 'धम्म' से गिरा। गनीमत थी कि बिस्तर इस समय खाली थी क्योंकि मुकेश थोडी दूर ही जमीन पर बैठा खाना खा रहा था। वह साँप एक चूहे का पीछा कर रहा था कि अचानक जल्दबाजी मे अपना सतुलन खो बैठा और मयार (छप्पर का आधार) से खाट के बिस्तर पर गिर पड़ा था। साँप के बिस्तर पर गिरते ही सरिता चीखती हुई वहाँ आँगन की ओर भागी। शायद मुकेश पर तो कोई प्रतिक्रिया ही नहीं हुई। वह चुपचाप अपना खाना खाता रहा। थोडी ही देर मे बिस्तर से उतर कर बाड़ी की ओर निकल गया।

सरिता ने तत्काल मगल को बुलवाया और सारा हाल कह सुनाया। मगल ने जा कर   मे झाँका। वहा मुकेश भोजन करके अपने

विस्तर मे [illegible] रहा था। ठीक उसी रात जमुना देवी तीर्थयात्रा से वापस आई। [illegible] ने पति और सास को [illegible] विस्तार से बताया और दोनों से निवेदन किया कि मुकेश के [illegible] कमरा [illegible] नहीं है। उन्हें वहाँ से हटाया जाय और दूसरे घर में ही उन्हें किसी कमरे में रखा जाय।

राजेश [illegible] अपने बड़े भाई के संबंध में कुछ सोच ही न [illegible] ऐसे भी [illegible] दुकान से थका-माँदा आया था [illegible] में सोने चला गया। जमुना देवी ने कहा -

"बहू तुम्हें इस कमरे में आने-जाने की क्या जरूरत थी? मैंने तुम से कहा था न किसी नौकर-चाकर के हाथ उसके [illegible] भेजवा देना। तुम खुद क्यों जाती थी उसके कमरे में? जमुना ने आगे कहा [illegible] किसी दिन वहाँ [illegible] साँप निकल आया होगा, रोज-रोज थोड़े ही [illegible]।"

जमुना ने [illegible] शब्दों में कह दिया कि घर का कोई दूसरा कमरा 'पागलखाना' नहीं बन सकता। मुकेश को उसके पुराने कमरे में ही रखा जाय।



सरिता अब एक बच्चे की माँ बन चुकी थी। अपने छह माह के पुत्र को गोद में लिये वह दिसम्बर की सुहानी धूप में छत पर बैठी हुई थी। तभी मंगल मुकेश को नहला-धुला कर, उसके कपड़े बदलवा उसे भी छत पर ले आया। मुकेश बड़ी ही हसरत भरी निगाहों से बच्चे की ओर देखने लगा। मानो उसे गोद में ले कर प्यार करना चाहता हो। सरिता ने छत पर से नीचे झाँक कर देखा। जब उसे विश्वास हो गया कि घर में कोई नहीं है तो उसने मुकेश से पूछा -

"आप इसे गोद मे लेना चाहते है?"

मुकेश ने स्वीकृति में अपनी मुंडी हिला दी। सरिता ने बच्चे को मुकेश के हाथों में दे दिया। साथ ही मंगल को सचेत किया कि कोई इधर छत पर आता दिखे तो वह इशारा कर दे। मुकेश बच्चे को गोद मे लेकर उसे प्यार करने लगा। उसे पुचकारने लगा। सरिता मुस्कराती हुई मुकेश की यह क्रियाकलाप देख रही थी।

दोपहर के बारह बजे थे। जमुना देवी पड़ोस के गाँव राजपुर में अपनी [illegible] मितानिन (मित्र) के यहाँ [illegible] सुनने गयी

गई थी। रामशरण तो उसे रतनपुर जाते समय जीप से राजपुर छोड़ गया था। रात के आठ बजे के बाद ही वह पुत्र के साथ ही लौटने वाली थी। सो सरिता निश्चिन्त थी कि मुकेश को भोजन परोसने पर आज कोई रोकटोक करे। सरिता थाली में भरा हुआ भोजन ले कर मुकेश के कमरे की तरफ गयी। उसने दरवाजा का सांकल खोला। कमरे के भीतर घुसना ही चाहती थी कि ठिठक कर रुक गयी। आज पुनः एक नागराज भी ठीक सामने फन काढ़े खड़े थे। उस कमरे में मुकेश उससे बेखबर अपने बिस्तर पर लेटा हुआ था। शायद दरवाजा खुलने की आवाज सुनते ही साँप ने आत्मरक्षा के लिए अपना फन काढ लिया था। सरिता थाली ले कर लौट आयी। घर में काम करती एक नौकरानी से उसने तुरन्त मंगल को बुलाने भेजा जो पास ही खलिहान में धान-मिजाई करा रहा था। मंगल के आने पर सरिता ने उसे बताया कि मुकेश के कमरे में अभी-अभी उसने पुनः एक साँप देखा है। सरिता ने आग्रह करके मुकेश को उस बाड़ी स्थित कमरे से बाहर बुलवा लिया और मुख्य घर के एक कमरे में उसका बिस्तर लगवा दिया।

तीन-चार दिनों बाद जमुना देवी ने मुकेश का डेरा डंडा फिर से बाड़ी स्थित उसके पूर्ववत् कमरे में ही भेजवा दिया। सरिता सास का विरोध न कर सकी। किन्तु उसने मन में ठान लिया कि वह वह किसी भी तरह से अपने जेठ को उस कालकोठरी से मुक्ति दिला कर ही रहेगी। मुकेश के मुक्तिमार्ग के लिए वह किसकी सहायता ले। काफी सोच-विचार के बाद उसने तय किया कि इस संबध में वह राधिका की सहायता ले सकती है।

राधिका शर्मा सरिता की सब से प्रिय सहेली थी जो एक बाल-विधवा थी। सरिता के मायके गौरेला की ही वह रहने वाली थी। बहुत छुटपन में ही उसकी शादी हो गयी थी और दुर्भाग्य से शादी के छह माह बाद ही वह विधवा हो गयी थी। कालान्तर में वह अपने स्वर्गवासी पति के घर-खेत बेच बाँच कर कुछ हजार रुपये ले आयी और गौरेला में ही एक मकान बनवा लिया था। थोड़ी सी खेती की जमीन भी ले ली थी। माँ के सिवाय उसका भी कोई न था। उसकी माँ का नाम तुलसी था जिसे सरिता चाची कहती थी। दोनों माँ-बेटी साथ ही गौरेला में रहती थीं। सरिता और राधिका साथ ही पली-बढ़ी। सदैव एक ही कक्षा में पढ़ी। एक साथ ही १२वी पास हुईं। १२वी के बाद सरिता जब बी० ए० पढ़ने बिलासपुर जाने लगी तो जिद करके राधिका को भी

अपने साथ ले गयी। [illegible] कृपा से ही वह भी बी० ए० पास हो गयी थी। [illegible] विलासपुर में अपने गर्ल्स हिन्दी कालेज के [illegible] से एम० ए० [illegible] बी० ए० करने के बाद मोनिका की [illegible] राधिका का सौभाग्य से गोरखा के ही मिडिल स्कूल में शिक्षिका की [illegible] मिल गयी थी। अब तो वह स्कूल के [illegible] गई थी। और अब एम० ए० भी कर रही थी।

तो मोनिका को अपने [illegible] मुकेश के [illegible] मिला राधिका के [illegible] में। उसने राधिका को एक पत्र लिखा

प्रिय राधिके,

मधुर स्मृति

आशा है तुम और चाची कुशल से होंगे। एक विशेष कारण से तुम्हें यह पत्र लिख रही हूँ।

अपनी ससुराल में मैं बड़ी सुखी हूँ [illegible] कोई भी सुख नहीं है जो मुझे यहाँ न मिल रहा हो किन्तु एक बात से दुखी भी हूँ। और यही दुख दूर करने के लिए (बल्कि समाप्त करने के लिए) मैं तुम्हारी सहायता चाहती हूँ।

तो सुनो- ससुराल आने पर मुझे पता चला कि मेरे एक जेठ भी हैं। उनका नाम मुकेश है। मुकेश भैया मेरे ससुर जी की पहली पत्नी के पुत्र हैं। मेरी सास (राजेश की माँ) मेरे ससुर की दूसरी पत्नी है। मुकेश भैया इंजीनियरिंग कालेज के आखिरी साल में पढ़ रहे थे तभी अचानक दुर्भाग्य से उन्हें पागलपन के दौरे पड़ने लगे और उन्हें कालेज के अधिकारियों ने घर (नवापारा) भेजवा दिया। यहाँ घर में उन्हे बाडी स्थित एक कमरे में बंद करके रखा जाता है। वह कमरा उनके लिए जरा भी सुरक्षित नहीं है। उस कमरे में दो बार साँप निकलते हुए स्वयं मैंने आँखों से देखा है। मैं उन्हें घर के किसी सुरक्षित कमरे में रखना चाहती हूँ पर मेरी सास ऐसा नहीं चाहतीं। राजेश भी न जाने क्यों अपने बड़े भाई के प्रति उदासीन हैं। मैं जान चुकी हूँ कि मेरे ज्यादा दबाव डालने से हम सास-बहू के बीच कटुता बढ़ेगी। मैं यह स्थिति नही आने देना चाहती।

किसी अच्छे भले चंगे इंसान को भी दिनरात कालकोठरी में बंद करके रखा जाय तो वह भी पागल हो [illegible] मुझे तो मुकेश भैया

पागल नहीं, बेहद सीधे-साधे आदमी लगते है। मंगल (हमारा प्रमुख नौकर) कहता है कि वे पढ़ाई-लिखाई में भी होशियार थे। तो मै चाहती हूँ कि मुकेश भैया अभी जिस स्थिति में हैं, उससे उन्हे किसी भी तरह से निकाला जाय। उन्हे किसी सुरक्षित स्थान पर रखा जाय। साथ ही किसी अच्छे मनोरोग विशेषज्ञ डाक्टर से उनका इलाज हो। मैं तो समझती हूँ कि डाक्टरी इलाज से अधिक उन्हें इसान के प्यार की जरूरत है। जब यहाँ लोग उन्हे कालकोठरी मे ही नही निकालना चाहते तो उनके डाक्टरी इलाज के लिए केसे तैयार होंगे? और मुकेश भैया की यही स्थिति, यही तकलीफ मेरे दुख का कारण है।

तो इस स्थिति मे क्या तुम कोई सहायता कर सकती हो? यदि मैं मुकेश भैया को तुम्हारे पास भेज दूँ तो उन्हे रख सकोगी? मै इसके लिए किसी भी तरह से अपनी सास को मना लूँगी। राजेश को तो कोई आपत्ति होगी ही नही।

मुकेश भैया के रहने, खाने-पीने डाक्टरी इलाज व दवाई के खर्चों के लिए मैं तुझे समय-समय पर रुपये भेजती रहूँगी। तुम उनके खर्चों के लिए बेफिक्र रहना। वैसे राजेश बेहद उदार है। उनसे मैं 'मुकेश भैया की वजह' बता कर भी रुपये मांगूंगी तब भी वे अपनी माँ को बिना बताये रुपये दे देंगे। और फिर नैतिक दृष्टि से घर की आय का आधा हिस्सा मुकेश भैया का भी तो है।

मै यह अच्छी तरह से जानती हूँ कि मुकेश भैया को अपने पास रखने के लिए तुम्हें चाची से भी राय लेनी पड़ेगी। तो तुम चाची से राय लेकर मुझे निःसंकोच शीघ्र ही पत्रोत्तर देना। चाची को मेरा प्रणाम कहना।

तुम्हारी ही सरिता

★ ★ ★

सरिता के पत्र पोस्ट करने के २१वे दिन उसके पास राधिका का पत्रोत्तर आ गया। सरिता ने उत्सुकता से लिफाफा खोला और पढ़ने लगी -

प्रिय सरिता

बहुत सा प्यार

तुम्हारा पत्र मिला। [illegible] बारे में जानकर हम दोनों को भी बहुत दुख हुआ। [illegible] तय किया है कि हम मुकेश जी को अपने पास [illegible] निःसंकोच जब चाहो भेज दो। हाँ, [illegible] उनकी देखरेख के लिये माँ [illegible] मनोरोग विशेषज्ञ डाक्टर को भी दिखायेंगे। मुकेश [illegible] उनकी अच्छी तरह से देखभाल होगी [illegible] रुपये भेजना चाहती हो तो मैं तुम्हें मना नहीं करूँगी [illegible] भेजो तो जैसा हमसे बन पड़ेगा हम उनके [illegible] औपचारिकता नहीं है सरिते।

जीजा जी व अपनी सास को मेरा प्रणाम कहना। और [illegible] को हमारा बहुत-बहुत प्यार।

तुम्हारी ही राधिका

★ ★ ★

राधिका का पत्र पढ़ कर सरिता को [illegible] खुशी हुई और अब सास को मनाने की चिंता ने भी आ घेरा। राकेश ने तो कोई आपत्ति ही नहीं की। जमुना देवी के सामने सरिता ने बहुत [illegible] कर भूमिका बाँधी। प्रस्ताव सुनकर पहले तो जमुना ने इंकार कर दिया पर सरिता भी अड़ी रही। अन्ततोगत्वा जमुना देवी ने मुकेश को गौरेला भेजने की अनुमति दे दी। शायद यह सोचकर कि 'बला टल रही है। स्थायी रूप से टल जाय तो अच्छा ही है।'

सरिता ने मुकेश को मंगल के साथ अपनी सहेली राधिका के पास रवाना कर दिया। बिलासपुर इंदौर लाइन पर पेंड्रा रोड छत्तीसगढ़ का आखिरी रेलवे स्टेशन है। दरअसल स्टेशन का नाम पेंड्रा रोड है पर बस्ती को, जो कि एक बड़ा कस्बा है, गौरेला कहते हैं। मध्यप्रदेश के सुप्रसिद्ध तीर्थस्थान व नर्मदा नदी के उद्गम-स्थल अमरकंटक के लिए बसे चलती है। तो मंगल और मुकेश ट्रेन द्वारा पेंड्रा रोड स्टेशन पहुँचे। मंगल ने ही कुंडी खटखटायी। दरवाजा खुला। सामने गेहुँए रंग की सुंदर नाक नक्सो वाली एक युवती खडी थी राधिका। राधिका ने आगंतुकों का स्वागत किया और उन्हें अपने साथ घर के भीतर ले गयी।

राधिका का घर ज्यादा बड़ा न था किंतु ईंट के बने मकान में रसोई घर के अलावा तीन कमरे थे। घर के दो कमरों में माँ बेटी रहती थीं। तीसरा कमरा मुकेश को दे दिया गया। घर के पीछे एक बाड़ी भी थी जहाँ कुँआँ व उसी में हैंडपंप लगा बाथरूम भी था। मंगल मुकेश को राधिका के यहाँ छोड़ अगले दिन वापस नवापारा लौट गया। फिलहाल सरिता के द्वारा भेजे दो हजार रुपये वह राधिका के हाथ दे गया था।

मुकेश, राधिका और उसकी माँ तुलसी एक साथ रहने लगे। मुकेश को यहाँ उसके कमरे में बंद करके नहीं बल्कि एक सामान्य व्यक्ति की तरह रखा गया। सुबह दस बजे राधिका स्कूल चली जाती। तुलसी बाड़ी में साग सब्जियों को पानी देने व निराई-गुड़ाई का काम करती। दोपहर १२ बजे वह बाड़ी के कुँए से नहा-धो कर लौटती और सबके लिए भोजन तैयार करती। दोपहर डेढ़ बजे राधिका लंच खाने आती और तीनों व्यक्ति साथ ही खाना खाते। एकाध सप्ताह बाद मुकेश बाड़ी में जा कर बैठने लगा। राधिका और तुलसी भी घर में एक मर्द के आ जाने से थोड़ा संबल महसूस करने लगे थे। यद्यपि पास-पड़ोस में एक अनजान मर्द को शरण देने की वजह से कानाफूसी शुरू हो गयी थी - वह भी जहाँ सिर्फ दो औरतें ही रहती थीं।

मुकेश को अब राधिका के घर मे पहुँचे एक माह बीत गया था। राधिका ने सरिता के सलाहानुसार उसे मनोरोग विशेषज्ञ को दिखाने का निश्चय किया। छत्तीसगढ के सर्वाधिक प्रसिद्ध व सफल मनोरोग विशेषज्ञ है - डॉ० प्रकाशनारायण शुक्ल, एम० डी०, जो रायपुर मे प्रैक्टिस करते हैं। तो राधिका एक दिन मुकेश को ले कर रायपुर गयी। साथ मे वह किसी सहायता के लिए अपने एक परिचित ग्रामीण बंधु को भी ले गयी। डॉ० शुक्ला ने मुकेश की अच्छी तरह से जाँच-परख की। रोगी से व राधिका से जितने तथ्य मिल सकते थे - मुकेश की 'मेडिकल हिस्ट्री' उन्होने ले ली। दवा लिख कर दे दी, डोजेज समझा दिये व प्रतिमाह एकबार मरीज को दिखा जाने को कहा। क्लिनिक से निकल कर राधिका ने बगल के ही रमा मेडिकल स्टोर्स से मुकेश की दवाइयाँ भी खरीद ली, फिर वे लोग वापस पेंड्रा रोड लौट गये।

पूरे एक वर्ष मनोरोग विशेषज्ञ द्वारा मुकेश का इलाज चलता रहा।

राधिका इस प्रकार [illegible] पास ने [illegible]
से दवाइयाँ दी गईं। और मुकेश में आश्चर्यजनक परिवर्तन होने लगा। वह धीरे-धीरे सामान्य होने लगा, [illegible] व राधिका को 'राधिका माँ' कहने लगा था। [illegible] के घरेलू कामों में वह हाथ भी बँटाने लगा था। तब [illegible] तुलसी और राधिका एक साथ फ्लू में बीमार पड़ीं और मुकेश ने खूब दोनों की सेवा सुश्रूषा की [illegible]।

सरिता तीज का त्योहार मनाने अपने मायके [illegible] आयी। यहाँ आ कर वह राधिका के घर क्यों न आती? आते ही सब से पहले उसने राधिका और उसकी माँ से मिलकर उस ख़ुशी [illegible]। सरिता को सर्वाधिक प्रसन्नता हुई अपने जेठ जी का पुत्र बिल्कुल सामान्य, स्वस्थ और प्रसन्नचित्त देखकर। मुकेश आँगन में एक कुर्सी पर बैठा अपनी एक सिविल इंजीनियरिंग की पुस्तक पढ़ रहा था। [illegible] पाजामा-कुर्ते में उसका गोरा स्वस्थ शरीर और भी निखर आया था।

"प्रणाम भैया" सरिता ने मुकेश को देखकर अपने दोनों हाथ जोड़े। मुकेश ने भी मुस्कुराते हुए अपने दोनों हाथ जोड़ दिये।

"मुझे पहचानते हैं या साल भर में हम सब को भूल गये आप?" सरिता ने हँस कर पूछा।

"तुम्हें कैसे भूल सकता हूँ सरिता। मुझे तो लगता है तुम पिछले जन्म में मेरी माँ थीं।" मुकेश ने बड़ा ही भावविह्वल होकर कहा। मुकेश के मुँह से यह बात सुनकर सरिता की आँखें भर आयीं।

"पिछले या अगले जन्म की बात कौन जानता है भैया? इस जन्म में आप मुझे अपने हृदय में छोटी बहिन का स्थान दे दें। इसी से मुझे बड़ी ख़ुशी होगी।"

घर के आँगन में सब लोग बैठे बहुत देर तक बातचीत करते रहे। सब ने रात को एक साथ भोजन किया। सरिता जब रात अपने माता-पिता के घर जाने लगी तब मुकेश ने उससे कहा-

"सरिता मैं तुमसे निवेदन करना चाहता हूँ।"

"भैया, आप मुझसे निवेदन न करें। मुझे आज्ञा दें।" सरिता ने विनम्रता से कहा।

"मैं सोच रहा हूं कि अपनी इंजीनियरिंग की छूटी हुई पढाई पूरी कर लूं।"

यह सुनकर सरिता सहित राधिका और तुलसी का भी चेहरा खिल उठा।

"आप जरूर पूरी कीजिए।" सरिता ने हार्दिक प्रसन्नता के साथ कहा।

"मैंने कोनी स्थित इंजीनियरिंग कालेज, बिलासपुर के प्रिंसिपल साहब को पत्र लिखा था। उनका उत्तर आया है। उनका कहना है कि मनोरोग विशेषज्ञ यह प्रमाण पत्र दे दें कि मैं अब बिल्कुल सामान्य हूँ तो वे मुझे फाइनल ईयर में एडमिशन दे देंगे।" यह तो बड़ी ही खुशी की बात है भैया। मैं नवापारा लौटते ही आपके भाई (राजेश) को रायपुर भेजूंगी। ताकि वे वहां से डाक्टर साहब से वह प्रमाण पत्र ले आयें।" "नवापारा वापस लौटने के बाद मंगल के हाथ तुम मेरे कालेज - खर्चे के लिए"

"आप जरा भी फिकर न करें। मैं आते ही आपके पास रुपये भेजवाती हूँ। आप तो बस कालेज वापस जाने की तैयारी कीजिए।" फिर सरिता ने साग्रह कहा- "अपनी माँ और भाई से मिलने आप भी नवापारा चलिये ना।"

"सोचता हूँ पहले कालेज में एडमिशन ले लूँ। कुछ पढाई कर लूँ। फिर सीधे दीपावली की छुट्टी में सब से मिलने नवापारा आऊँगा।"

"अच्छा भैया। जैसी आपकी मर्जी।"



दो साल बीत चुके थे। मुकेश सिविल इंजीनियरिंग में बी०ई० प्रथम श्रेणी से पास करने के बाद मध्य प्रदेश सरकार के सिंचाई विभाग मे इंजीनियर हो गया था। विगत नौ माह से वह अंबिकापुर मे असिस्टेंट इंजीनियर के पद पर काम कर रहा था।

सरिता इस साल जब तीज मनाने गौरेला आयी तो हमेशा की तरह राधिका के भी घर गयी। कुछ खास बात अपने मन मे तय करके ही वह इस बार अपनी सहेली और उसकी माँ से मिलने आयी थी। जब तुलसी ने खुश होकर आज्ञा दे दी तब सरिता ने राधिका का मन

ख्याल कर तुमसे पूछा

मर जाऊँ जी मैं ब्याह करूँगा

"अच्छे भले इंजीनियर साहब एक विधवा से क्यों शादी करने लगे?" राधिका ने आँखों में पानी भर कर जवाब दिया।

"विधवा होना कोई अपराध या अनर्थ नहीं है राधिके। और फिर तुम नाममात्र की विधवा हो, यह बात मैं भी जानती हूँ। तुम अपनी स्वीकृति दो तो मैं गाँव से मंगल को सेठ जी के पास भेजती हूँ। उनके मन की बात जानने के लिए।"

"यदि मुकेश बाबू मुझे स्वीकार कर सकेंगे तो यह तो मेरा सौभाग्य होगा सरिता।"

अगले सप्ताह ही अंबिकापुर में मुकेश ने मंगल से कहा- "यदि राधिका जी मुझे स्वीकार कर लें तो मुझसे बड़ा भाग्यशाली और कौन होगा मंगल?"

जिस दिन मुकेश और राधिका विवाह-सूत्र में बँधे उस दिन राधिका की माँ - तुलसी से भी अधिक खुश थी - सरिता। अपनी प्राणप्यारी सहेली की देवरानी जो बन गयी थी वह। नत्थाराम के घर में जिस दिन राधिका ने बहू के रूप में पहली बार कदम रखा सरिता दौड़ कर उससे लिपट गयी। उसके नेत्रों में प्रेमाश्रु छलक आये और उसने कहा-

"आज से अब मैं तुम्हें दीदी कहूँगी।"

"मैंने तो आज से पहले भी तुम्हें अपनी बहिन ही समझा है सरिते।" राधिका के नयनों में भी प्रेमाश्रु छलक आये थे और दोनों जेठानी-देवरानी प्रेमविह्वल होकर लिपट गयीं।

कुछ दिनों बाद मुकेश और राधिका अंबिकापुर जाने की तैयारी करने लगे। एक रात दोनों पति-पत्नी जमुना देवी से बातचीत करने के लिए उसके कमरे में जा बैठे। इधर-उधर की चर्चा के बाद मुकेश ने जमुना से कहा- "माँ, तुम भी हमारे साथ अंबिकापुर चलो ना।"

राधिका ने भी तत्काल कहा- "इन्होंने मेरे मुँह की बात छीन ली। मैं भी आपसे बिल्कुल यही बात कहने वाली थी। हाँ माँ जी, आप भी हमारे साथ चलिये ना। यहाँ घर की देखभाल करने के लिए सरिता तो

है ना। चलिये न माँ जी।'

बेटे-बहू का प्रेमपूर्ण आग्रह सुनकर जमुना देवी प्रेमविह्वल हो उठी। आज उसने सच्चे हृदय में यह महसूस किया कि मुकेश भी उसका अपना ही बेटा है।

''हाँ बहू, मैं तुम लोगों के साथ जरूर चलूँगी।''

जमुना देवी ने अपने नेत्रों में प्रेमाश्रु भर कर बेटे - बहू के हाथ पकड़ लिये।



दीपक के विचार

माधुरी जी मुझ से उम्र में केवल तीन साल बड़ी थीं। [illegible] तारीख १५ सितम्बर थी और मेरी १५ दिसम्बर। कहना न होगा हम दोनों का जन्म सन् ५५ में ही था। कभी किसी वजह से [illegible] उन्हें अपना 'डेट ऑफ बर्थ' बना लिया था। विनिमय से [illegible] भी अपनी जन्मतिथि बनानी पड़ी थी। या फिर उन्होंने [illegible] मुझसे थोड़ा बड़ा (बड़ी) होने का रौब झाड़ सकें। वे बड़ी तो तीन साल थीं, किन्तु व्यवहार ऐसे करती थी जैसे वे मुझसे तीन साल से भी ज्यादा बड़ी हों। और मैं उनका आदर भी [illegible] उनसे तीन साल से भी ज्यादा छोटा होऊँ। वे हमेशा मुझे 'तुम' कह कर सम्बोधित करतीं और मैं उन्हें सदैव 'आप' कहता। वह मुझे 'दीपू' या दीपक कह कर बुलातीं। मैं उनके नाम के आगे 'जी' लगाना कभी न भूलता था। एकाध बार वह मुझे 'शुक्ला जी' भी कह देती थीं।

बहुत ही सुंदर थीं वह। स्वर्णाभ-सा खूब गोरा रंग था उनका, नीलाभ से नैन और जैसे तराशे हुए से तीखे नाक नक्श। स्त्रियों की औसत ऊँचाई से वह तनिक लंबी ही थीं। सलवार - सूट और साड़ी-ब्लाउज दोनों ही उन पर खूब फबते थे। वह हर रोज नये-नये और सुंदर-सुंदर कपड़े पहिनती थीं। अपने वस्त्रों से वे नहीं बल्कि शायद उनसे उनकी वेशभूषा आकर्षक लगती थी। बहुत ही स्मार्ट लगती थीं वह। कोई बात शुरू करने से पहले उनके मुखमण्डल पर मृदुल मुस्कान बिखर जाती थी और समाप्त करने के बाद हँस देती थीं। कभी मधुर गति से और कभी उन्मुक्त हो कर।

मुझे याद है जब पहली बार मैंने उन्हें देखा था तब मैंने १०वीं की परीक्षा दी थी। माधुरी जी उस गाँव-बीजापुर में, बी०ए० प्रथम वर्ष की परीक्षा देकर आयी थीं। दरअसल बचपन में ठीक स्कूल प्रवेश के दिनों में मेरे बायें पैर में एक नुकीली कील घुस गयी थी जिसकी

वजह स मैं चार माह तक चल फिर न सका था। फलस्वरूप मे उम्
साल स्कूल में भर्ती न हो सका। और मेरे हम-उम्र कक्षा में मुझसे एक
साल आगे हो गये थे। स्मरण है, माधुरी जी ने मुझ पर एक दो बार
यह रौब भी झाड़ा था कि वह कालेज में पढती है और मैं अभी हाई
स्कूल मे ही नहीं निकल सका हूँ।

परिवार मे किसी के घर एक लड़की की शादी हो रही थी। उसी
शादी में सम्मिलित होने मेरी माँ बीजापुर गयी। माँ के साथ ही मैं
भी वहाँ गया हुआ था। उस शादी वाले घर में शायद एक मेहमान के
रूप में ही माधुरी जी भी वहाँ आयी हुई थी। वे थी तो वहाँ स्वय
'गेस्ट' पर सारे दिन वे उस घर मे ऐसे काम करती थीं जैसे वे हो
'होस्ट'। मेहमानो को परोसने और सब को भोजन करवाने का जिम्मा
वहाँ शायद उनको ही दिया गया था। वहाँ आये मेहमानों की पंक्तियो
मे उन्होंने कई बार मुझे भी परोसा था। उस घर में होने वाली शादी
मे बहुत सारे मेहमान आये हुए थे- जैसा कि आमतौर पर छत्तीसगढ
के ब्राह्मण परिवारों में होता है। (मध्यप्रदेश का रायपुर और बिलासपुर
सभाग मिलकर छत्तीसगढ़ कहलाता है रायपुर सभाग में बस्तर जिला
भी शामिल है जो कि भारत का सब से बड़ा जिला भी है।)

गर्मी के दिन थे। रात को बहुत सारी स्त्रियाँ, बच्चे और किशोर,
जिनमे मैं भी शामिल था, ऊपर छत पर सोते थे। काफी बड़ी खुली
छत थी जिसके एक ओर जमीन पर महिलाएँ अपना बिस्तर लगा लेती,
दूसरी ओर बच्चे और किशोर। रात को सोने से पहले लड़के - लड़कियो
की काफी देर तक अंत्याक्षरी चलती। कहना न होगा लड़के एक तरह
होते और लड़कियाँ दूसरी तरफ। अंत्याक्षरी के खेल में छत्तीसगढी बोली
के गीत, हिन्दी कविताएँ- जिनमें फिल्मी गीतों की भी छूट थी तथा
संस्कृत के सुंदर श्लोक सभी कुछ शामिल रहते थे। लड़कियो के दल से
अंत्याक्षरी खेलते हुए मैंने अनुभव किया था कि माधुरी जी को
रामचरितमानस के दोहे, छंद, संस्कृत के सुंदर श्लोक और अच्छी
साहित्यिक कविताएँ बहुत अच्छी तरह से कंठस्थ थीं। जहाँ दोनों दल
के ७५ प्रतिशत से अधिक लोग फिल्मी गीतों से काम चलाते थे वही
माधुरी जी सुंदर-सुंदर श्लोक और कविताएँ बोलती थीं। कालान्तर में
मुझे ज्ञात हुआ था कि हिन्दी और संस्कृत साहित्य दोनों ही बी०ए०
में माधुरी जी के विषय थे। इनके अलावा अर्थशास्त्र व सामान्य अंग्रेजी
भी। पर विषय की चीजें कितनों को कंठस्थ रह पाती हैं? मुझे स्मरण

है, एकाध बार ऐसा भी हुआ था जब छत पर सारे लोग सो गये थे। केवल मैं और माधुरी जी या तो अंत्याक्षरी खेल रहे हैं या फिर इधर-उधर की कोई बात करते हुए देर रात तक जागते रहे हैं।

विरोधी पक्ष में 'र' अक्षर से कोई अंत्याक्षरी समाप्त होते ही माधुरी जी तत्काल बोल उठती थीं-

'राम के रूप निहारती जानकी, कंकन के नग की परछाँहीं।

याते सबै सुधि भूलि गयो, करि टेक रही पल टारत नाहीं॥'

'क' अक्षर से समाप्त अंत्याक्षरी पर माधुरी जी अक्सर कविवर शंकर का यह कवित्त बोल उठती थीं-

'कज्जल के कूट पर दीपशिखा सोती है कि,

श्याम घनमंडल मे दामिनी की धारा है।

यामिनी के अंक में कलाधार की कोर है कि

राहु के कबन्ध पै कराल केतु तारा है।

'शंकर' की कसौटी पर कंचन की लीक है कि,

तेज ने तिमिर के हिये में तीर मारा है।

काली पाटियों के बीच मोहिनी की माँग है कि,

ढाल पर खाँडा कामदेव का दुधारा है।'

राम विवाह का यह सुंदर दोहा और कविवर शंकर का यह कवित्त माधुरी जी के मुख से मैंने इतनी बार सुना थी कि मुझे भी यह कंठस्थ हो गया था।

मेरी माँ से माधुरी जी की एक दो दिनों में ही बहुत अच्छी 'दोस्ती' हो गयी थी। माँ को वह बिना किसी रिश्ते के भी 'चाची' कहने लगी थीं। वह छत पर माँ के बगल में ही अपना भी बिस्तर लगातीं। यह भी याद है कि माँ, माधुरी जी और मैं - हम तीनों एकाध बार देर रात तक अपने-अपने बिस्तर पर पड़े-पड़े गप्पें मारते रहे थे। उनके बिस्तरों के कुछ फासले पर मैं भी लड़कों की पंक्ति में लेटा उनसे बातचीत में मशगूल रहा था।

एक दिन माँ को उन्होंने अपने गाँव आने का न्यौता भी दिया। तब माँ ने उनसे कहा था-

'तुम्हारी शादी में जरूर आयेंगे, बुलाओगी न'

इस सुनकर व हंस पड़ा था।

कालांतर में मुझे पता चला था कि उनका पूरा नाम माधुरी मिश्रा है और वह खोगसरा के भूतपूर्व जमींदार स्वर्गीय मुरलीधर मिश्र की बेटी हैं। यह भी ज्ञात हुआ था कि माधुरी जी की दादी और मेरी नानी बचपन में साथ खेली-खायी थीं। यह रहस्य तब खुला था जब माँ को अचानक एक बार माधुरी जी के गाँव में उनका मेहमान बनना पड़ा। कहाँ तो वे उनकी शादी में जाने को उत्सुक थी पर नियति उन्हें पहले ही उनके घर ले गयी थी।

माँ ने ही मुझे बताया था कि वे अमरकंटक से लौट रही थीं। उनके साथ गाँव की दो औरतें भी थीं। ये तीनों मकर संक्राति के अवसर पर नर्मदा स्नान करने गयी हुई थीं। उनकी ट्रेन वापसी में खोंगसरा स्टेशन पहुँचने के बाद आगे न बढ़ सकी। आगे लाइन में कहीं मालगाड़ी के डिब्बे पटरी से उतर कर इधर-उधर फैले हुए थे। यात्रियों को अगले दिन बसों से कोटा या बिलासपुर पहुँचाया जायगा। तीनों औरतें रात भर गाड़ी में या स्टेशन पर कैसे बितायें? तभी माँ को अचानक ख्याल आया- अरे! यह तो माधुरी का गाँव है। चलो उसी के यहाँ चलते हैं। माँ अपनी दोनों सखियों के साथ माधुरी जी के घर पहुँच गईं। अपनी ड्योढ़ी पर माँ को आयी देख उनकी खुशी की सीमा न रही। माधुरी जी दौड़कर माँ से लिपट गईं। उनकी दादी भी माँ को अपने घर आयी देखकर बेहद प्रसन्न हुईं। दोनों दादी-पोती ने मिलकर माँ और उनकी सखियों की खूब आवभगत की। इन तीनों अतिथियों को उन्होंने पूरे सप्ताह भर तक अपने गाँव से निकलने न दिया। उसी दौरान माँ को पता था की माँ कि माँ (यानी मेरी नानी) और माधुरी जी की दादी (उनके पिता की माँ) बचपन की सखी थीं। माँ माधुरी जी के सुंदर स्वभाव और उनके धनाढ्य घर से खूब प्रभावित हो कर हमारे गाँव लौटीं थी।

तो बीजापुर में शादी संपन्न होने के बाद हम भी विदा हुए। आते समय मैं माधुरी जी से मिलना न भूला। वे ऊपर छत पर अपने कपड़े डाल रही थीं। शायद नहा कर लौटी थीं। मैंने उन्हे आँगन से ही देखा और सीढ़ियाँ लाँघते हुए उनके पास छत पर पहुँच गया।

"माधुरी जी, हम लोग जा रहे है।" मैंने उन्हें बताया।

"कहाँ जा रहे हो दीपू?" वह मेरी ओर पलटीं। "नवापारा अपने

गाँव मैंने बताया

माँ के साथ

"हाँ"

"अच्छा" वह थोड़ी सी उदास हुई। शायद हमारे जाने से। "कल मै भी जा रही हूं।" उन्होंने मुझे बताया।

"खोंगसरा?"

"हाँ"

"तुम चाची को लेकर कभी हमारे गाँव जरूर आना।" माधुरी जी ने मुझ से कहा।

"आप की शादी में जरूर आयेंगे। बुलायेगी न?" न जाने मेरे मुँह से भी कैसे यह बात निकल गयी।

माधुरी जी मुस्कुरा दीं। उनके मुखमंडल पर लाज की एक हल्की सी रेखा उभर आयी।

"इस साल कालेज में कहाँ एडमिशन ले रहे हो?"

"सी०एम०डी० कालेज बिलासपुर में।" मैंने उन्हें बताया।

"अच्छा!" तब तो तुम से अक्सर भेंट होती रहेगी। मै भी बिलासपुर मे ही पढ़ती हूँ। गर्ल्स डिग्री कालेज में।"

वैसे पहले भी किसी चर्चा के दौरान वह मुझे बता चुकी थी कि विद्यानगर, बिलासपुर में उन लोगो का मकान है और वे वहीं कालेज में पढ़ती हैं।

"प्रणाम" सीढ़ियाँ वापस उतरने के पहले मैंने माधुरी जी के सामने अपने दोनो हाथ जोड़कर कहा। उन्होंने भी मुस्कुरा कर अपने दोनों हाथ जोड़ दिये।

अक्सर तो नहीं, पर कभी-कभी बिलासपुर में माधुरी जी से मेरी भेंट होती रही। कभी बाजार में, कभी कहीं। यदा-कदा वे अपने कालेज जाते हुए भी मुझे दिखी थीं। वे जब भी मुझे देखतीं हँस कर बात जरूर करतीं।

फिर दो साल बीत गये। माधुरी जी बी०ए० पास करने के बाद स्थायी रूप से अपने गाँव खोंगसरा में ही रहने लगी थीं। न जाने किन कारणों से अभी तक उनका ब्याह न हो सका था और मुझे उनके गाँव

जाने का अवसर भी न मिला था।

इस बीच मैंने बी०एस-सी० द्वितीय वर्ष की परीक्षा पास कर ली। फिर दूसरे प्रयास मे प्री-मेडिकल-टेस्ट की परीक्षा भी। इन्दौर के मेडिकल कालेज में मैं प्रथम वर्ष में पढ़ने लगा।

दशहरे-दीपवली की हमारी एक माह की छुट्टियाँ हुई। मैं बिलासपुर जिले मे स्थित अपने गाँव नवापारा जाने के लिए इन्दौर से रवाना हुआ। बिलासपुर पहुँचने से पाँच-छः स्टेशन पहले ही खोगसरा रेलवे स्टेशन है। जब मेरी ट्रेन खोंगसरा पहुँची तो स्टेशन का नाम पढते ही मुझे माधुरी जी का स्मरण हो आया। अचानक मै अपना बैग और सूटकेस लेकर स्टेशन पर उतर पडा।

माधुरी के विचार

तुलसी के चौरे पर दीया जलाया ही था कि मंगल ने आकर बताया "नोनी, एक मेहमान आयें हैं।"

"कौन है?" मैंने पूछा।

"मैं तो पहचानता नहीं।" मंगल ने कहा।

"कहाँ हैं?"

"बाहर ही खड़े हैं।"

"अच्छा, उन्हें अंदर बुला लाओ।"

थोड़ी ही देर में एक हमउम्र सुंदर नवयुवक अपने कंधे पर बैग लटकाये आँगन में आ खड़ा हुआ। मुस्कुरा कर उसने मुझसे कहा, "प्रणाम"।

"शायद आपने मुझे पहचाना नहीं। मेरा नाम दीपक शुक्ला है "दीपू" युवक ने अपना परिचय दिया।

"ओह...दीपू तुम!... काफी बड़े हो गये हो।" मेरे मुँह से सुखद आश्चर्यपूर्ण स्वर निकला। दो साल बाद मैं दीपू को देख रही थी। दीपू से पिछली मुलाकात बिलासपुर में अप्सरा क्लाथ सेंटर में हुई थी। गोल बाजार के पास तब वह शायद बी०एस-सी० प्रथम वर्ष मे था आओ बैठो। अपना बैग इधर रख दो।" मैंने पुनः उनसे कहा। दीपू अपना बैग रख कर बरामदे में कुर्सी पर बैठ गया। मैं भी उसके पास ही एक दूसरी कुर्सी पर बैठ कर उससे बातें करने लगी।

"कहो भई आज कैसे रास्ता भूल गये?" दीपू को यों आया देख मुझे सचमुच बहुत प्रसन्नता हुई।

"नहीं, ऐसी बात नहीं है। आपके यहाँ आने की मेरी बहुत दिन से इच्छा थी।" दीपू कहने लगा।

"कहाँ हो आजकल?" मैंने उससे पूछा।

"इन्दौर में पढ़ता हूँ। वहीं से आ रहा हूँ।"

"अच्छा।"

"क्या पढ़ रहे हो इन्दौर में?" मैंने आगे पूछा।

"मेडिकल कालेज में हूँ। फर्स्ट ईयर में।"

"ह्वेरी गुड। डॉक्टर बनने की तैयारी है!" मैंने हँस कर कहा।

"फिलहाल तो यही विचार है।" दीपू भी मुस्कराया।

मैं दीपू के साथ बातचीत कर रही थी तभी मेरी दादी-माँ घर की बाड़ी से कुछ सब्जी तोड़ कर वहाँ पहुँची। अपनी साड़ी के आँचल से कुछ बैंगन, टमाटर और मिर्च उन्होंने धीरे से बरामदे में ही डाल दिया। फिर वह दीपू की ओर प्रश्नवाचक मुखमंडल के साथ देखने लगीं।

"ये दीपू हैं दाई, दीपक। नवापारा वाली सुकुलाइन चाची के सुपुत्र हैं।" मैंने दादी माँ से दीपू का परिचय कराया।

"तुम्हारा ननिहाल नारायणपुर में है?" दादी माँ ने दीपू से छत्तीसगढ़ी बोली में पूछा।

"जी हाँ" दीपू ने स्वीकृति दी और दाई के चरण छू लिये। "जीते रहो बेटा। मैं तुम्हारी नानी को बहुत अच्छी तरह से जानती हूँ। हम बचपन में साथ खेली-कूदी, खायी फिरीं हैं।" दादी माँ ने दीपू को आशीश देते हुए बताया।

दादी माँ बरामदे में जमीन पर बैठ कर दीपू से बतियाने लगी थीं। उन दोनों को बातचीत में मशगूल देख मैं चाय बनाने चली गयी।

रात को दीपू भोजन करके उठा तो मेरी पाककला की तारीफ के पुल बाँधने लगा। यहाँ कोई खाने वाला भी तो नहीं है। घर में इतनी सारी चीजें हैं दूध, दही, घी और मक्खन की तो भरमार है। पर क्या बनाकर किसे खिलाऊँ? इतने बड़े विशाल घर में बस-मैं और दादी माँ हम दो प्राणी ही पड़े रहते हैं रात को एक दो नौकर-चाकर घर में

सो जाते हैं।

मेरे पिता जी का देहान्त हुए तो कई साल हो गये। मुझे याद है जब पिता जी की अर्थी उठने लगी थी तो दादी माँ कैसा करुण क्रंदन कर रही थीं ..

"मैं चुड़ैल जिंदा हूँ और मेरा जवान बेटा मर गया।" यही चीख-चीख कर दादी माँ अपनी छाती पीटे डालती थीं। माँ को भी गुजरे अब तीन साल से ऊपर हो गये। और सुधीर-मेरा छोटा भाई, वह नौ वर्ष का था जब काल के क्रूर हाथों ने उस सुदर-खिलौने बच्चे को हमसे छीन लिया था। नदी में डूब कर उसकी मृत्यु हुई थी। मेरे सामने ही वह अपने कपड़े लेकर नदी में नहाने गया था फिर वह लौट कर न आया। लौटी थी उसकी लाश। किन-किन त्रासदियों से गुजरे हैं हम। कैसा अभिशप्त है परिवार हमारा। घर में चारों ओर अँधेरा। एक चिराग तक न बचा। एक दीपक तक...।

दीपक.. दीपू को देखते ही न जाने क्यों मुझे सुधीर की याद हो आती है। दीपू को मैंने पहली बार तब देखा था जब अपनी एक सहेली की शादी में बीजापुर गयी थी। दीपू अपनी माँ के साथ वहीं शादी में आया था। दीपू को पहली बार देखते ही मेरी आँखें भर आयी थीं। बीजापुर में हमारे साथ वह भी अक्सर नहाने नदी जाया करता था। उसे गहरे पानी में जाने से मैं हमेशा रोकती थी, यद्यपि वह तैरना जानता था।

नहाने के बाद कपड़े बदल कर जब मैं अपनी साड़ी पत्थर पर पटकने लगती थी तो अक्सर दीपू कह उठता- "लाइये मैं छाँट देता हूँ।"

और कभी-कभी वह मेरी साड़ी छीनकर सचमुच छाँटने लगता। खूब प्यारा लड़का था। जब तक मैं बिलासपुर में पढ़ती रही यदा-कदा दीपू से भेंट हो जाती थी। बी०ए० करने के बाद तो मैं स्थायी रूप से गाँव में ही आ कर रहने लगी थी। माँ के देहान्त के बाद तो हमने बिलासपुर का अपना घर भी किराये पर उठा दिया था। अब शहर जाना नहीं के बराबर ही होता था।

इतनी बड़ी खेती बाड़ी और जमीन जायदाद की देखभाल मैं अकेली भला क्या कर सकती। वह तो सौभाग्य से मंगल हमें मिल गया था। हमारा बीस साल पुराना नौकर हमारा आम मुख्तारा बहुत ही ईमानदार

महनती और नेक आदमी है।

जब तक माँ जिंदा रहीं मेरे हाथ पीले करने की चिंता उन्हें सताती रही। दादी माँ की तो जो भी हो पर मेरे ब्याह की सब से अधिक चिंता मंगल को ही थी। हर साल दो-चार वर तलाश करके आता था, दादी माँ से मशविरा करता पर अंतिम निर्णय उन्हें मुझ पर ही छोड़ना पड़ता और यहीं बेचारा मंगल और दादी माँ भी अपना सा मुँह लेकर रह जाते थे। मैं दादी माँ को छोड़कर शायद कहीं जाना नहीं चाहती थी।

ऐसे भी लड़कियों की शादी तय करना कितनी टेढ़ी खीर होती है; विशेष कर हमारे मध्य प्रदेश के छत्तीसगढ़ इलाके में तो लड़कियों की शादी करना सचमुच एक दुष्कर कार्य ही है। पर मेरे लिये तो अब एक दो ऐसे वरों की भी खबर आ चुकी थी जो घरजमाई बनने के लिए भी इच्छुक थे। शायद दादी माँ और मंगल भी अब यही चाहने लगे थे। खैर...।

दीपू को भोजनोपरांत मैं ऊपर अपने साथ वाले कमरे में ले गयी। उसके लिए बिस्तर लग चुका था। कमरे में आकर वह अपने बिस्तर पर बैठ गया। सामने दीवाल पर टँगे दो फोटो को वह ध्यान से देखने लगा फिर उठ कर फोटो के निकट चला गया।

"ये तो शायद आपके माता-पिता हैं लेकिन यह किसका फोटो है?" दीपू ने स्वर्गीय सुधीर के फोटो को देखते हुए पूछा।

"ये मेरा छोटा भाई था दीपू, सुधीर।"

"मैंने उदास स्वर में दीपू को बताया।"... ओह! आयेम सॉरी सारी।" दीपू भी दुखी होकर बोल उठा।

दीपू अपनी लुंगी समेटते हुए पुनः पलँग पर आ बैठा।

मैं उसके सामने आराम कुर्सी पर बैठ गयी। रात के नौ बज चुके थे। नीचे दादी माँ अब तक अपने कमरे में जा कर शायद सो चुकी थीं। आज रात एक नौकर के साथ घर में मंगल स्वयं सोने आया हुआ था।

"इतने बड़े घर में केवल आप दो जनें ही रहते हैं?"

दीपू का मतलब मुझ से और दादी माँ से था।

"मंगल भी हमारे परिवार का एक सदस्य जैसा ही है दीपू।" मैंने

दीपू स कहा

"लेकिन जब आप यहाँ से चली जायेंगी . मेरा मतलब है जब आपकी..." दीपू कुछ कहते-कहते रुक गया।

"मैं यहाँ से कहीं नही जाऊँगी दीपू" मैने दीपू का अभिप्राय समझ कर उत्तर दिया।

"लेकिन कब तक?" दीपू बोल उठा।

मैं बस मुस्कुरा कर रह गयी।

मैं रात के ग्यारह बजे तक वहाँ बैठी दीपू से बाते करती रही।

"अच्छा दीपू, अब तुम सो जाओ। तुम्हे सफर की थकान भी होगी।" मैंने दीपू से कहा और उठ कर बगल वाले अपने कमरे में चली गयी।

दीपू हमारे यहाँ साल दिन रहा। जाना तो वह दो दिन बाद ही चाहता था पर एक बार मेरे और एक बार दादी माँ के आग्रह से वह रुक गया था। हमारा गाँव उसे बहुत पसंद भी आया। मैं उसे अपने खेत और बाग-बगीचे भी घुमाने ले गयी। दीपू को विदा करने बैलगाडी में बैठकर मैं भी स्टेशन तक गयी।

जब वह रेलगाड़ी में चढ़ गया तो मैंने उससे कहा- "यहाँ से आते-जाते हमारे गाँव कुछ दिन रुक जाया करो।"

"कोशिश करूँगा।" उसने मुस्कुरा कर कहा।

दीपू चला गया। मैं स्टेशन पर उसे हाथ हिलाते तब तक खडी रही जब तक उसकी गाड़ी काफी दूर न निकल गयी। मेरी आँखें भर आयी।

कई दिनों तक मैं दीपू को याद करती रही।

दीपक के विचार

चार साल बीत गये। मैं अब एम०बी०बी०एस० के अंतिम वर्ष मे पढ़ रहा था। मै हर साल छुट्टियो में इन्दौर से जब भी बिलासपुर जाता तो रास्ते में खोंगसरा स्टेशन-माधुरी जी के गाँव मे उतर जाता। पाँच-सात दिन माधुरी जी के घर रहता। फिर उसके बाद 'ही अपने गाँव के लिए रवाना होता। हर दीपावली और गर्मी की छुट्टियों में लगभग यह मेरा नियम सा हो गया था। कालेज में छुट्टियाँ शुरू होते ही मै खुशी से भर उठता था। मुझे अपने गाँव जाने की अपेक्षा माधुरी जी के गाँव पहुँचने की ज्यादा ही आतुरता रहती थी'

खांगसरा गाँव में माधुरी जी की बहुत बड़ी खेती बाड़ी थी। धान, गेहूँ, गन्ना, साग-सब्जी और फल-फूल की। इन सभी के बड़े-बड़े खेत और बाग बगीचे थे। माधुरी जी के साथ कई बार उनके खेत और बगीचों को घूमा था मैं। कृषि उत्पादन से उनकी वार्षिक आय पाँच लाख रुपये से ऊपर ही होगी। मुझे याद है एक बार उनके नौकर प्रमुख मंगल ने मुझे बताया था कि एक लाख रुपये के तो वे केवल सन्तरे ही बेचते हैं उफ! नदी के किनारे-किनारे मीलों दूर तक फैले उनके सन्तरे के बगीचे! वैसे ही तोतापरी और लँगड़े आम के बगीचों का नज़ारा। माधुरी जी के बगीचों में अमरूद और कटहल भी जैसे टूट पड़ते थे। जब भी दीपावली की छुट्टियों में मैं उनके यहाँ गया छत पर चारों ओर मूँगफली सूखते हुए पाया।

कितना रमणीक भी था उनका गाँव। पहाड़ों की गोद में और अरपा नदी के तट पर बसा वह सलोना सा गाँव मानो प्रकृति के हिंडोलने में झूलता था।

माधुरी जी का गाँव किसी हिल स्टेशन से कम न था।

माधुरी जी की हवेली किसी 'फाइव स्टार' होटल से कम खूबसूरत व सुविधाजनक न थी।

सुबह आँख खुली नहीं कि सामने टेबल पर चाय की केतली तैयार। नहा कर आता तो माधुरी जी रोज कोई नये किस्म का नाश्ता बनाकर मेरी प्रतीक्षा करती रहतीं। नाश्ते के बाद फिर चाय। और चाय के साथ ही माधुरी जी के ये प्रश्न भी - "आज लंच में क्या खाओगे दीपू? "आलू-गोभी तो पसंद करते हो न? टमाटर और बैंगन एक भुरता बना दूँ? तुम्हे डुबकी बहुत पसंद है न? दाल भिगोयी है। कल बनाऊँगी।" (डुबकी छत्तीसगढ़ का एक डिश है)

माधुरी जी के घर में बहुत लंबा-चौड़ा मैनू होता था। खीर, गुलाब जामुन, खोए की जलेबी, दही बड़े, समोसे, आलूगुंडे वगैरह, चुनाव करना मुश्किल हो जाता था। रसोई का पूरा विभाग माधुरी जी के ही हाथों में था। वे उसके योग्य और अधिकारिणी भी थीं। पाककला में पटु और निपुण जो थीं वे।

और माधुरी जी के घर में मेरी सब से सुखद उपलब्धि थी - उनकी आत्मीयता. उनका और दादी माँ के मुख पर निश्छल प्रेम।

कभी-कभी मेरे मन में विचार आता कि डाक्टर बनने के बाद

क्यों न मैं माधुरी जी के गाँव में ही अपना एक छोटा सा अस्पताल खोल दूँ।

मेडिकल कालेज के अंतिम वर्ष का इम्तिहान दिया और अपने नियमानुसार इस गर्मी मे भी मै माधुरी जी के गाँव पहुँच गया। हमेशा की तरह माधुरी जी मुझे देख कर प्रसन्न हुईं। वही स्वागत-सत्कार जिसमे औपचारिकता लेशमात्र भी न होती। हाँ, उस समय दादी माँ की कमी वहां खल रही थी। माधुरी जी से पता लगा कि वे गाँव के कुछ लोगो के साथ तीर्थयात्रा में गयी हुई हैं।

सारा दिन माधुरी जी के साथ गप-शप मे बीत जाता। उनकी चिरपरिचित मुस्कुराहट और उन्मुक्त हँसी में अब मैं एक मादक संगीत का अनुभव भी करने लगा था। मैं बचपन से माधुरी जी को देख रहा था पर इतना माधुर्य मैंने उनमे अब तक न देखा था। न जाने वह ब्याह क्यो न करती थीं। जब वह अठारह की थी जब और अब मे उनके शरीर सौष्ठव में जरा भी फर्क नहीं आया था बल्कि जैसा कि मैने पहले कहा अब तो मेरी आँखो में वे और भी सुंदर दिखती थी।

न जाने क्यो इस समय माधुरी जी का साथ छोड़कर अपने गाँव जाने की इच्छा ही न होती थी। पर वहाँ मै कब तक रहता। एक सप्ताह बाद मैं चलने की तैयारी करने लगा यह देख माधुरी जी ने मुझसे कहा -

"दादी माँ के आते तक रुक जाओ दीपू। वह अब आठ-दस दिनो मे लौट आयेंगी। मैं भी अकेली हूँ न। तुम्हारे संग दिन अच्छा कट जाता है।"

अंधे को क्या चाहिए दो आँखे, मैं रुक गया। दिन भर ऋतुराज वसंत के बयार चलते रहते। कहीं दूर बौरे हुए आम्रकुंजों की भीनी-भीनी खुशबू से वातावरण मदमस्त रहता। माधुरी जी मेरे सामने से उठकर चाय बनाने के लिए भी जातीं तो उनकी अनुपस्थिति मुझे खलने लगती। और कभी-कभी तो मैं उनके पीछे-पीछे ही रसोई घर में ही पहुँच जाता।

"आओ बैठो" मुझे वहाँ पहुँचा देख माधुरी जी एक पीढ़ा मेरी ओर बढ़ा देतीं और चाय बनाने लगतीं।

शाम को हम दोनों खुली छत पर चाय के साथ ठहाके लगाते रहते। शाम ढलते ही मैं माधुरी जी के साथ उतर कर रसोई घर में

जा बैठता। कभी-कभी रोटी बेलने में और सब्जी काटने में उनकी मदद भी कर देता।

"तुम तो बहुत अच्छी रोटी बेल लेते हो। बहू को तकलीफ नहीं होगी।" वह हँस कर कमेंट करतीं। रात को भोजन के बाद अक्सर वे मेरे कमरे में आ बैठतीं। ग्यारह बजते-बजते वे बगल के अपने कमरे में सोने चली जातीं। पहाड़ी स्थान होने के कारण इस समय तक वहाँ ठंड भी काफी बढ़ जाती। जब माधुरी जी मेरे कमरे से उठकर चली जातीं तो एकाध बार मैं भी उनके कमरे में जा धमकता - उनके पीछे ही।

"क्यों आज नींद नहीं आ रही है? आओ बैठ जाओ।"

माधुरी जी हँस कर कहतीं।

मैं एक कुर्सी खींच कर बैठ जाता और माधुरी जी अपने पलंग के बिस्तर पर। रात के एक दो बजे तक उन्हें अपने गप्पों से अगाये रखता।

एक रात तो मैं उनके कमरे में तीन बजे तक बैठा उनसे गप्पें हाँकता रहा।

"अच्छा दीपू अब सोना चाहिए। देखो तीन बज गये हैं। माधुरी जी ने मेरा ध्यान घड़ी की ओर दिलाया था।

कैसे रात के तीन बज गये थे - मुझे तो पता तक न लगा था।

मेरे जीवन के वे बड़े ही मीठे दिन और अजीबोगरीब अनुभव थे। उन अनुभवों को मैं क्या संज्ञा दूँ - मुझे कुछ सूझता नहीं।

फिर आई वह रात ......

वह रात्रि यौवन की दहलीज पार कर चुकी थी। माधुरी जी अपने कमरे में सो रही थीं। आज वह जल्दी ही - रात के दस बजे ही मेरे कमरे से उठ कर चली गयी थीं। मैं अपने कमरे में बिस्तर पर पड़ा इधर से उधर करवटें बदल रहा था। नींद मुझसे कोसों दूर थी, यह तो मैं बर्दाश्त कर लेता पर मेरे अंदर कोई खतरनाक आँधी चल रही थी। लगा कि यह आँधी मुझे कहीं उड़ा कर ले जायगी, मुझे तबाह कर देगी। मैं अपने अंदर-ही-अंदर किसी दैत्य से लगातार संघर्ष कर रहा था। जो मुझे पीसे डालता था। कुछ ऐसा होता है जिसे शब्दों में व्यक्त नहीं किया जा सकता।

मेरे दुर्बल मन के सबल दानव ने मुझ पर एक जबर्दस्त प्रहार किया

और मैं परास्त हो गया। उस प्रहार का दर्द जीवन भर भुलाया जा सकेगा और उस दर्द की दवा... दवा या जहर? उसी की तलाश मे मै अपने बिस्तर मे उठ पड़ा . ।

मैं अपने कमरे से निकल कर खुली छत पर चला गया। यहाँ मेरी विवशता पर आकाशगंगा में तारे व्यंग्य से जैसे मुस्कुरा रहे थे और चाँद हँस रहा था।

खुली चाँदनी मे मैं पन्द्रह बीस मिनटों तक बेसब्री से टहलता रहा। तभी कहीं दूर कोई उल्लू बोला।

मै छत से अपने कमरे की ओर लौटा पर मेरे पैर बरबस ही माधुरी जी के बेडरूम की ओर बढ़ गये। धीरे से उनके कमरे का दरवाजा ठेला। मुझे मालूम था माधुरी जी अपना दरवाजा बद नही करती। मैं माधुरी जी के पलँग के निकट जा कर खड़ा हो गया। वे गहरी नींद में डूबी हुई थीं। खुली खिड़की से झाँकती हुई चाँदनी ठीक माधुरी जी पर पड़ी रही थी और उस रोशनी मे उनकी संगमरमरी देहयष्टि को मैं कुछ क्षणों तक अपलक निहारता रहा। फिर धीरे से उनके पलँग पर बैठ गया।

तभी माधुरी जी जाग पड़ी।

"कौन है...? यह कहते हुए वह अपने बिस्तर पर उठ कर बैठ गयीं और हाथ बढा कर उन्होंने अपने बेड के बगल में रखा टेबल लैम्प खट से जला दिया।

कमरे में प्रकाश फैल गया। मुझे देखते ही माधुरी जी ने अपनी अस्त-व्यस्त साड़ी सँभाल ली।

"... दीपू तुम!.. तुम अभी तक सोये नही?" मुझे अपने इतने निकट बैठा देख उन्होंने साश्चर्य पूछा।

"क्या बात है दीपू?... कुछ चाहिए तुम्हें?" माधुरी जी ने पुनः थोड़ी देर बाद अत्यंत मधुर स्वर में पूछा।

"... हाँ ... मुझे ... प्यास लगी है" मेरे मुँह से किंकर्तव्यविमूढ का स्वर निकला।

"पानी तो मैंने तुम्हारे कमरे में टेबल पर रख दिया था।"

"अच्छा लो पी लो मेरे पास भी रखा है।" कुछ क्षण चुप रह कर वह पुन बोलीं। उन्होंने टेबल पर रखे जग से गिलास में पानी उँडेल

कर मेरी ओर बढ़ा दिया।

एक ही साँस में गटागट पानी पी गया।

"और चाहिए?" उन्होंने पुनः मीठे स्वर में पूछा।

"... नहीं.... बस..." मैंने धीरे से कहा।

अब माधुरी जी ने अपने टेबल लैम्प के पास की रखी घड़ी पर नजर डाली। उनके साथ ही मेरी दृष्टि भी घड़ी की सुइयों की ओर घूम गयी। रात के ढाई बज रहे थे।

"जाव जा कर सो जाव, काफी रात बीत चुकी है" माधुरी जी ने मेरा कंधा थपथपाते हुए कहा। तनिक मुस्कुराई भी।

लेकिन बजाय उनके पलँग से उठने के मैंने उनके हाथ अपने हाथ मे ले लिये। वह फिर मुस्कुराई।

"..... माधुरी जी..." मेरे मुँह से अस्फुट स्वर निकला।

"हूँ" उन्होंने बिना होंठ खोले ही कहा।

"माधुरी जी..."

"बोलो दीपू।" मिश्री सी मीठी और बर्फ की तरह शीतल आवाज माधुरी जी के कंठ से टपकी।

"..... माधुरी जी..." मैं आपके बिना एक पल भी नही रह सकता। मैं... आपसे प्यार करता हूँ।" मैं उन से लिपट कर सिसकने लगा।

माधुरी जी बहुत देर तक मौन बैठी रही। उनके कंधों पर मेरा कंठ रह-रह कर सिसक उठता था। फिर धीरे से उन्होंने मेरी पीठ पर हाथ रखा।

"रोते नहीं दीपू।" माधुरी जी के स्वर में वही चिरपरिचित मधुरता थी, कोई लेशमात्र भी अंतर नहीं।

"प्यार तो मैं भी तुम से करती हूँ दीपू। पर इसे हम दोनों को एक दूसरे को बताने की भी जरूरत पड़ेगी यह मैंने नहीं सोचा था।" वे स्नेहिल स्पर्श से मेरी पीठ सहला रही थीं। अब मेरे आँसू सूख चुके थे पर मैं अब भी माधुरी जी के कंठ से लिपटा पड़ा था।

"जब तुम यहाँ आते हो..." माधुरी जी ही बोल रही थीं।

'तो मुझे कितनी खुशी होती है तुम शायद इसका अनुमान नहीं

लगा सकोगे दीपू। और जब तुम यहाँ से चले जाते हो तो कई दिनो तक किसी काम मे मन नही लगता। अगर संभव होता तो हम तुम्हे यही अपने पास ही रख लेते। लेकिन तुम पर हमारा इतना 'अधिकार' नही है दीपू। इसलिए केवल 'प्यार' से और फिर कभी आओगे यह सोचकर ही संतोष कर लेते है।'

माधुरी का स्वर उनके नाम को सार्थक करता था। यद्यपि वह मेरी दुर्भावना समझ चुकी थी। तथापि बिना किसी उत्तेजना के अपनी मीठी और कोमल वाणी के रास्ते वे मुझे अपने पावन प्रेम की सरिता की ओर लिये जा रही थीं। वे मुझे ऐसे समझा रही थी जैसे मै छोटा बच्चा हूँ।

माधुरी जी कहती जा रही थी, " .. तुम मुझे अपने मन मे जितना प्यार करते हो, मेरा दावा है दीपू कि मै तुम्हे उससे ज्यादा प्यार करती हूँ। काश! यह मन भी प्रत्यक्ष दिखाने का होता।"

अब माधुरी जी ने मुझे धीरे से अपने से अलग किया।

"अच्छा दीपू, जाव जा कर सो जाओ।"

मैं उनके बिस्तर पर ही बैठा रहा। फिर मैने मंद स्वर मे पुनः धृष्टता की।

"यदि आपको बुरा न लगे तो मै यहीं आपके साथ सो जाऊँ?"

"बुरा लगने की बात नहीं है दीपू। मै तुम्हे अपने साथ सुला भी लेती। मैं यह भी नहीं कहती कि यह अनुचित या अशोभनीय है। लेकिन न तो यह तुम्हारे हित में है और न ही मेरे।"

अंततः मुझे अपने कमरे में वापस लौटाना ही पड़ा। मेरे आते ही माधुरी जी ने अपने कमरे का दरवाजा अंदर से बंद कर लिया। साँकल व सिटकिनी चढ़ाने की स्पष्ट आवाज भी मैंने सुनी।

सुबह होते ही वासना का भूत मुझ पर से उतर कर न जाने किधर और कहाँ भाग गया था। अब उसका स्थान ले लिया था लज्जा और ग्लानि ने।

माधुरी जी से आँख मिलाना तो दूर रहा, सारा दिन मैं अपने कमरे से बाहर तक न निकल सका।

रात हो गयी। लेकिन उस रात माधुरी जी सोने ऊपर, अपने कमरे

से नहीं आयी। सवेरा होते ही मैंने माधुरी जी से [illegible] को कहा।

"मैं अभी पैसिंजर से जाऊँगा।"

"अच्छा" उन्होंने धीरे से कहा।

अपने एक नौकर को उन्होंने मुझे स्टेशन छोड़ आने की आज्ञा दी। मैं बैलगाड़ी में बैठकर स्टेशन चला गया। हर बार की तरह इस बार माधुरी जी मुझे स्टेशन तक छोड़ने भी नहीं आयीं।

चार साल फिर बीत गये। न जाने इस बीच इंदौर बिलासपुर आते-जाते कितनी बार मैं ट्रेन से खोंगसरा स्टेशन से गुजरा लेकिन वहाँ उतर नहीं सका। दो साल पहले खोंगसरा स्टेशन पर अचानक मंगल (माधुरी जी के नौकर प्रमुख) से भेंट हो गयी थी। उसने बताया था कि "आज माधुरी जी की दादी माँ की बरसी है, कुछ मेहमान आ रहे हैं जिन्हें लेने आया हूँ।" मंगल ने मुझे भी उतर चलने को कहा था, साथ ही शिकायत भी की थी अब मैंने उनके गाँव आना छोड़ ही दिया है।

ममतामयी दादी माँ के देहान्त का समाचार सुनकर मेरे नेत्र भर आये थे।

"मैं फिर कभी आऊँगा मंगल।" मैंने उसे झूठा आश्वासन दे दिया था। अपने सुख और शांति के घर में जाने का अधिकार तो मैंने स्वयं ही खो दिया था।

इण्टर्नशिप के बाद नौकरी तो मुझे मिली नहीं। डिप्लोमा करने लगा। इस दरम्यान मेडिसिन के प्रोफेसर साहब मेरे बड़े हितैषी हो गये थे। एम०डी० के लिए भी रजिस्ट्रेशन हो गया। एम०डी० करने के बाद मुझे नौकरी मिली। बस्तर जिले के एक गाँव में, पिछले आठ महीने से प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र में, मेडिकल आफीसर के पद पर मैं काम कर रहा था।

'माधुरी जी का विश्वास मैंने हमेशा के लिए खो दिया है' इस बात का गहरा आघात मुझे भीतर तक बेधता चला गया था। अब उनके सामने क्या मुँह लेकर जाऊँगा। यही विचार मेरे मन में उठते रहते और मैंने उनके गाँव जाना अब छोड़ ही दिया।

किन्तु लाख कोशिशों के बावजूद भी क्या मैं माधुरी जी को

तुला मन।

माधुरी के विचार

मेरे अभिशप्त परिवार की शृंखला मे एक कडी और जुड गयी थी। अब तो दादी माँ भी नही रही। इतने बडे घर मे बस मै अकेली पडी रहती थी। लगता था सारा जीवन अकेले ही बीत जायेगा। अकेला और सुनापन कभी-कभी काटने को भी तो दौडता है। अपने को व्यस्त रखने के लिए मैने प्राइवेट रूप से हिंदी साहित्य मे एम०ए० की पढाई शुरू कर दी और दो साल मे एम०ए० द्वितीय श्रेणी से पास हो गयी। मगल तो अब भी मुझे ब्याह कर लेने की ही सलाह देता था। पिछले माह कही से एक विधुर वर का सन्देश ले कर आ गया था। कहता था—

"कोई बाल बच्चा नही है। लडका आयुर्वेदिक डाक्टर है। घरजमाई बनने को तैयार है। यहाँ डाक्टरी भी करेगा और खेती भी देखेगा। हाँ, लडका बायें पैर से थोडा लँगडा कर चलता है।"

अट्ठाइस साल की स्त्री के लिए अब इस दृष्टि से सुयोग्य वर कहाँ मिलेगा!



उस शाम ठड कुछ अधिक ही बढ गई थी। सोचा, ऊपर जा कर शाल निकाल कर ओढ लूँ। मै ऊपर अपने कमरे मे पहुँची। आलमारी खोलकर शाल निकाली। लाल रंग का वह सुदर शाल हाथ मे लेते ही मुझे दीपू के स्मरण ने आ घेरा। यह शाल कभी उसी ने ही मुझे ला कर दिया था।

"इसे मैंने आपके लिए 'स्पेशली' कश्मीर मे लिया था।"

दीपू ने यह शाल मुझे ओढाते हुए कहा था।

जब भी दीपू यहाँ आया, दादी माँ के लिए और मेरे लिये भी हमेशा कोई-न-कोई उपहार जरूर लाया। दादी माँ तो हमेशा उसके दिये ताँबे के लोटे मे ही अपने पीने का पानी भरती थी।

मैंने शाल ओढ लिया।

'दीपू आजकल कहाँ होगा? अब तो कहीं डॉक्टर हो गया होगा। उस घटना के बाद- 'घटना' नही कहना चाहिए, उस दिन के बाद दीपू यहाँ से गया तो फिर लौट कर आज तक नही आया। हॉ उसके जाने

[illegible]

"आशीर्वाद [illegible] मैं

[illegible]

मैं उस [illegible] की [illegible] [illegible] हो [illegible] मुझे [illegible] कर [illegible]

[illegible]

बस इतना ही लिखा था. यह पत्र [illegible] दिया था। दरअसल उस रात में दीपक का [illegible] थी। पुरुष को [illegible] प्रेम में [illegible] ही नहीं [illegible] का भी कोई [illegible] है; यदि नारी और पुरुष के [illegible] का कृष्णार्जुन का रथ [illegible] लिया जाय या [illegible] नारी ही कृष्ण [illegible] यह अपने [illegible] रथ को [illegible] ईश्वर ने [illegible] और कृष्ण अर्जुन की पराजय की ओर कभी भी नहीं ले जायगा।

लेकिन क्या मैं स्वयं दीपू को भूल सकी? हर साल दशहरे के आसपास और फागुन लगते ही मैं दीपू को बहुत 'मिस' करती थी। दीपावली तो नहीं, पर दो तीन दशहरा और दो होली भी दीपू ने हमारे घर में मनाये थे। उफ! उस होली में तो उसने मेरी हालत खराब कर दी थी। टेसू के रंग में मुझे नहलाया ही था, ऊपर से मेरे चेहरे पर काले रंग का बूटपालिश भी पूरी तरह से मल दिया था। 'काली बिल्ली, काली बिल्ली' कह कर चिढ़ाता था। दादी माँ, मंगल और घर के सारे नौकर चाकर मेरी हालत देखकर हँसते रहे थे।

शायद 'टेलीपैथी' सचमुच कोई चीज होती है। दीपू की याद आँककर अपने कमरे से नीचे उतरी तो देखा कि मेरे एक नौकर रामू ने किसी का सूटकेस ला कर बरामदे में रख दिया। इससे पहले कि मैं रामू से पूछती 'किसका सामान है?' वह एक गाय की ओर दौड़ गया जो आँगन में सूखते गेहूँ खाने जा रही थी। मैं सूटकेस के पास जा कर ध्यान से देखने लगी। 'डॉ० दीपक शुक्ला, एम०डी०' अंग्रेजी में लिखा एक टेप सूटकेस के ऊपर चिपका हुआ था। तो दीपू आ रहा है...! अचानक इतने दिनों बाद!... मेरी खुशी की सीमा न रही!

अब तक रामू ने गाय की साँकल पकड़ कर उसे खींच लिया था।

"दीपक बाबू आ रहे हैं दीदी" रामू ने दीपू के आने की पुष्टि भी कर दी।

"कहाँ हैं?" मेरा हर्ष विभोर पूर्ण स्वर निकला।

"संतरे के बगीचे में मगल के साथ रुक गये हैं" रामू ने बताया।

"अच्छा.."। थोड़ी देर बाद मैंने रामू को आज्ञा दी, "तुम सब्जी बाड़ी चले जाव। गोभी, पताल (पताल कहते है छत्तीसगढ़ मे टमाटर को), तलने के लायक पतले बेगन और कुछ दूसरी अच्छी सब्जियाँ तोड लाओ।"

"अच्छा दीदी।" रामू गौशाला की ओर जाते हुए बोला। मै स्वय उडद दाल भिगोने के लिए भागी ताकि दूसरे दिन नाश्ते मे बडे बना सकूँ। दीपू पहले बडे बहुत पसंद करता था।

मेरी चाय और बेसन के कुछ पकौडे तैयार हुए ही थे कि मगल के साथ एक सुडौल युवक आँगन में आ खड़ा हुआ। सूट-टाई में वह काफी स्मार्ट लग रहा था। छ. फुट से ऊपर निकलता हुआ लंबा कद, गोरा, सौम्य और सुंदर चेहरा जिस पर अब अल्हड़ता के नामो निशान नहीं। पहले की अपेक्षा दीपू अब काफी गंभीर लगता था। साथ ही वह अब पहले से हृष्ट-पुष्ट भी हो गया था। पर ओवरवेट मे जरा भी न लगता था। बेहद आकर्षक और सलोना सा व्यक्तित्व हो गया था उसका।

मैं रसोईघर की खिड़की मे मुस्कुराते हुए चुपचाप दीपू को देख रही थी। "नोनी (बेटी छत्तीसगढ़ में)...." मंगल आँगन मे खड़ा मुझे आवाज लगा रहा था। "अरे भई देखो तो कौन आया है। मंगल की दुबारा आवाज सुनते ही मैं आँगन में निकल आयी। दीपू ने मुस्कुरा कर मेरी ओर देखा और अपने दोनो हाथ जोड़कर बोल उठा - "प्रणाम।"

मेरी आँखें छलछला आयीं। मैने भी अपने दोनो हाथ जोड दिये। मंगल तो चाय पी कर खलिहान की ओर चला गया। मैं दीपू के पास ही आँगन में बैठकर उसका और उसकी माँ का हालचाल पूछने लगी। अब दीपू पहले से काफी गंभीर और अति विनम्र लगता था। उसकी चचलता, चपलता और अल्हड़पन शायद उसके विद्यार्थी जीवन के साथ ही समाप्त हो गये थे। पहले वह कैसे बात-बात पर अट्टहास कर उठता था। दादी माँ को तो वह यहाँ आते ही उठा कर गोल घूम जाता था। उसका वह बेफिक्रीपन अब जरा भी नहीं दिख रहा था।

[illegible]

[illegible] आप, [illegible] साथ भोजन करने के लिए बाध्य किया।

“आप भी मेरे साथ खाइए न,” दीपू ने [illegible] कहा।

“कोई बात नहीं पहले तुम खा लो; मैं फिर खा लूँगी”

“अकेला तो मैं हमेशा ही खाता हूँ क्योंकि माँ भी [illegible] नहीं करती हैं, लेकिन आप अपने लिए भी निकालिए न,” और दीपू की बात मुझे माननी ही पड़ी।

डिनर के बाद मैं दीपू को ऊपर ले गयी। [illegible] उसके पूर्ववत् कमरे में पहुँच चुका था, और [illegible] मैं उसे ऊपर पहुँचा कर रसोई घर का शेष काम निपटाने नीचे आ गयी। कोई आधे घंटे बाद मैं पुनः ऊपर पहुँची। दीपू के लिए पानी का जग और गिलास मैंने उसके टेबल पर रख दिया। वह नाइट-सूट पहने अपने पलँग पर बैठा 'टू इन वन' पर आकाशवाणी से 'रात नौ बजे का' समाचार सुन रहा था। मैं भी इजीचेयर पर बैठ गयी। समाचार समाप्त होते ही उसने अपना 'टू इन वन' बंद कर दिया।

“कोई भजन सुनेंगी?” थोड़ी ही देर में दीपू मुझसे पूछा।

“तुम सुनाओगे?” मैंने हँस कर कहा।

मुझे स्मरण था- दीपू भी बड़ा ही सुंदर गाता था। संगीत का भी वह बेहद प्रेमी था। सदैव अपने साथ वह 'टू इन वन' और कुछ भजनों व गीतों के कैसेट साथ रख कर चलता था। दीपू हमारे आग्रह पर मुझे और दादी माँ को गा कर सुनाता था। भजन और गीत। बच्चन जी की 'मधुशाला' तो उसे पूरी कंठस्थ थी। अक्सर वह गुनगुनाते रहता-

“... बैर बढ़ाते मस्जिद मंदिर

मेल कराती मधुशाला।”

अंधा-युग नाटक में भी शायद उसने अपने कालेज में भाग

लिया था। दादी माँ के सामने वह अक्सर अभिनय की मुद्रा में बोल उठता था

''थके हार के हम घूम घूम पहरा देते हैं छिप जाव, छिप जाव ...''
वगैरह वगैरह।

मेरी बात सुनकर दीपू मुस्कुरा उठा।

''मेरे पास कुछ सुंदर भजनों के कैसेट्स हैं।''

दीपू ने कहा और कुछ टेप मेरी ओर बढ़ा दिये। मैं टेप पर लिखे भजन देखने लगी। फिर पसन्द करके मैंने एक टेप दीपू की ओर बढ़ा दिया। दीपू ने वह टेप 'टू इन वन' में लगा कर प्ले कर दिया। थोडी ही देर में अनूप जलोटा जी का गाया भजन कमरे मे गूँजने लगा-

'राधा ऐसी भई श्याम की दीवानी
के ब्रज की कहानी हो गयी
एक भोली भाली गाँव की ग्वालन
के पंडितों की बानी हो गयी
राधा ऐसी भई ...'

कुछ भजन और गीत सुनने के बाद मैं दीपू के कमरे से उठी, रात के दस बजे रहे थे।

''अच्छा दीपू, गुड नाइट।''

मुझे प्रत्युत्तर मिला और मैं बगल के अपने कमरे में चली गयी। अब ठंड जरा भी न थी बल्कि शायद हल्की सी उमस ही मैं महसूस कर रही थी। सोने से पहले मैंने अपने कमरे की दोनो खिड़कियाँ और दरवाजा भी पूरी तरह से खोल दिये।

दीपू को यहाँ आये तीन दिन बीत चुके थे। कई साल पहले की हमारी संयुक्त दिनचर्या फिर से सुचारु रूप से शुरु हो गयी थी। पहले दीपू जब यहाँ आता था तो उसके आग्रह पर मैं और कभी-कभी दादी माँ भी संध्या समय उसके साथ घूमने निकल पडते थे। नदी के तट पर हमारे सतरों के बाग की पगडडियों पर दूर तक चलना दीपू को अच्छा लगता था। इस समय आग्रह करके दीपू को मैं उधर ले जाने लगी। उस शाम हम दोनों उधर टहलते हुए चले जा रहे थे। तो अचानक मैंने देखा कि दीपू की आँखें भर आयी है

"दादी माँ अब तक [illegible] थीं" दीपू ने कहा, और [illegible] अपना आँखें पोंछने लगा।

उस दिन सुबह [illegible] दीपू का [illegible] नीचे ढूंढते हुए बैठक में पहुँची [illegible] कि [illegible] की सहायता से स्वर्गीया दादी माँ का [illegible] फोटो वहीं दीवाल पर टाँग रखा था [illegible] खींचकर ले गया था। फोटो [illegible] उस पर [illegible] सुंदर माला भी डाल दी। यह दृश्य देख कर मेरी आँखें भर आयीं।

दीपू नाश्ता करके अपने कमरे में चला गया था। इसके पीछे ही, थोड़ी देर बाद मैं भी चाय लेकर ऊपर पहुँची। [illegible] कमरे में एक भजन गूंज रहा था, मैंने चाय टेबल पर रखी ही थी कि दीपू ने कहा-

"ये लो मैं आपको देना ही भूल गया।"

दीपू के हाथ में लाल [illegible] लगा [illegible] सा पैकेट था।

"क्या है?" मैंने मुस्कुरा कर पूछा।

दीपू ने वह पैकेट मेरी ओर बढ़ा दिया। मैं कुर्सी पर बैठ कर वह पैकेट खोलने लगी। दीपू भी मेरे सामने एक दूसरी कुर्सी पर बैठकर चाय पीने लगा। मैंने पैकेट खोलकर देखा। चाँदी की चमचमाती एक जोड़ी सुंदर पायल थी।

"बहुत सुंदर है। थैंक्यू" मैंने दीपू से मुस्कुरा कर कहा।

दीपू भी मुस्कुरा कर चाय पीने लगा। उनके सामने ही मैंने वे दोनों पायल अपने पैरों में बाँध लिये। टेप पर बजते भजन का स्वर मैंने हाथ बढ़ा कर तनिक ऊँचा कर दिया।

दीपू की चाय और टेप पर बजते भजन दोनों एक ही साथ समाप्त हुए। दीपू ने हाथ बढ़ाकर अपना खाली कप टेबल पर रख दिया। मैं पायल पहिन कर खड़ी हो गयी। कमरे में इधर-उधर टहलती हुई चहलकदमी सी करने लगी। मेरे पायल जैसे रुनझुन बोल उठे।

"बाजत पैजनियाँ रे . . ."

टेप तो बंद हो चुका था। फिर ये कौन गा रहा था? मैंने पीछे पलट कर देखा दीपू मीठे स्वर में गुनगुना रहा था फिर गाने लगा।

"बाजत पैजनियाँ रे ..."

मैं मुस्करा कर अपनी पायल की ताल दीपू के मधुर स्वर से मिलाने लगी। वह गाये जा रहा था-

'बाजत पैजनियाँ रे,

ठुमक चलत रामचन्द्र

ठुमक चलत रामचन्द्र

बाजत पैजनियाँ रे '

मैं उन्मुक्त हो कर हँस पड़ी।

"मेरी पायल की तुलना भगवान् राम की पायल से करते हो दीपू..." मैं खिलखिला कर हँसती रही।

पर दीपू ने जैसा सुना ही नहीं। वह मुस्कराता हुआ मेरी पायल की ओर देखता हुआ गाने में मगन हो गया था। वह गाता ही रहा..

'विद्रुम से अरुण अधर

बोलत मृदु बचन मधुर

सुभग नासिका बीच

लटकत लटकनियाँ

ठुमक चलत रामचन्द्र

बाजत पैजनियाँ...'

अब दीपू को यहाँ आये एक सप्ताह हो गया था। कितना बदल गया था दीपू इस बार पाँच साल में। बिल्कुल नपी तुली बात करता था। उसकी हर वाणी से सौम्यता टपकती थी और हर व्यवहार में शिष्टता। कहाँ गया उसका बड़बोलापन और गप्पी मिजाज? पहले तो रात के दो तीन बजे तक मुझे अपनी गप्पों से जगाये रखता था। कभी-कभी तो उसे मुझे अपने कमरे से भगाना पड़ता था। घड़ी की ओर ध्यान दिलाना पड़ता था। अब जब से वह यहाँ आया था, मेरे कमरे में एक बार भी आ कर नहीं बैठा। उसकी बगल में ही तो मेरा कमरा था। और मेरा दरवाजा भी चौबीसों घंटे खुला रहता था।

दीपक के विचार

चार साल से भी अधिक समय के बाद इस बार मैं माधुरी जी

[illegible]

[illegible]

[illegible] तुमने माधुरी जी से भी कहा था, "अगर [illegible] ... मैं तुम्हें अपनी बहू बना लूँगी।

माँ की यह बात सुनकर माधुरी जी खिलखिलाकर हँस पड़ी थीं, उन्मुक्त अट्टहास के साथ।

यह तब की बात है जब दीपावली के समय माधुरी जी से हम शादी वाले घर में मिले थे। शायद तभी से मेरे 'मन की चिड़िया' माधुरी जी ने छीन लिया था जिसे मैं आज तक [illegible] नहीं सका।

मैंने माँ से फिर कहा, "अगर मैं माधुरी की उमर का होता और वह मेरी उमर की होतीं तब शायद तुम्हें कोई आपत्ति नहीं होती। मैं पूछता हूँ आखिर पत्नी का ही उमर में छोटा होना जरूरी क्यों है? एक पचास साल का आदमी बीस साल की लड़की से ब्याह कर लेता है तब समाज में कोई हो-हल्ला नहीं मचता। अगर माधुरी जी ही मुझ से उमर में तीन साल बड़ी हैं तो इस में कौन सा गुनाह हो गया?"

मैं उन्हें समझाता रहा। अंततोगत्वा माँ मान गयी थीं। वह स्वयं माधुरी जी से बात करने उनके गाँव जाना चाहती थीं पर मैंने उन्हें रोक लिया था। यह सोचकर कि यदि माधुरी जी ने इनकार कर दिया तो माँ को उनके ही घर में कहीं अपमानित न होना पड़े। आघात पहले उन्हें ही न सहना पड़े मैं तो बाद में सहता। फिर मैंने ही 'दुस्साहस' किया। माधुरी जी के पास आ कर सीधे उनसे बात करने का। साफ-साफ।

एक लंबे अरसे के बाद माधुरी जी के यहाँ आने पर पहले तो मैं थोड़ा सशंकित था। पता नहीं, अब माधुरी जी मुझ से कैसा व्यवहार करेंगी मेरे प्रति कैसा रुख अपनायेंगी। वैसे चार मास पहले उन्हें मेरा पूर्व पत्र तो अवश्य ही मिला होगा। लेकिन न तो मैंने

मुझसे इस पत्र के बारे में पूछा और न ही उन्होंने स्वयं उसकी कोई चर्चा की। माधुरी जी का वही पूर्ववत् निश्छल और निष्कपट प्रेम देखकर मेरे सारे क्लेश और कलुष मिट गये थे। सही अर्थों में मैं इस बार अब यहाँ 'आश्रम की शांति' का सा अनुभव कर रहा था। लेकिन उनसे बात कैसे शुरू करूँ, कहाँ से शुरू करूँ? यही सोचने में मेरी सप्ताह भर की छुट्टी बीतने को आ गयी।

रात के नौ बज चुके थे। माधुरी जी अपना सारा काम निपटा कर मेरे कमरे में आ बैठी थी। पानी का जग और गिलास भी मेरे कमरे में रख जाती।

आकाशवाणी से समाचार सुनने के बाद 'टू इन वन' पर मैंने एक कैसेट प्ले कर दिया था। माधुरी जी के इजीचेयर पर बैठते ही मैंने बजते हुए गीत की आवाज काफी धीमी कर दी। फिर भी हम गीत के बोल स्पष्ट सुन रहे थे

"......

ना उम्र की सीमा हो,

ना जनम का हो बंधन,

जब प्यार करे कोई,

तो देखे केवल मन . ."

शायद यह टेप मैंने जानबूझकर प्ले कर दिया था।

इच्छा हुई कि माधुरी जी से पूछूँ - 'यह गीत आपको कैसा लगता' है पर हिम्मत न जुटा पाया।

"कल सुबह मैं यहाँ से जा रहा हूँ।" मैंने माधुरी जी को बताया।

"इतनी जल्दी.. अरे अभी रुको भई। बहुत दिनों में तो आये हो। होली में कुछ ही दिन रह गये हैं। होली मना कर चले जाना।" माधुरी जी के स्वर में प्रेमपूर्ण आग्रह था।

"नहीं माधुरी जी, मुझे जाना होगा। कल मेरी छुट्टी का आखिरी दिन है। परसों से ड्यूटी ज्वाइन करनी है।"

"अरे वहाँ और भी तो डाक्टर होंगे।'

"नहीं, मैं वहाँ अकेला हूँ। कई जंगली गाँवों के बीच में बस हमारा ही वहाँ एक हेल्थ सेंटर है। काफी दूर दराज से पेशेंट आते रहते हैं।

विचार भटका।

[illegible]

"माधुरी जी!"

"हूँ।"

"मैं यहाँ [illegible] आपसे कुछ पूछने आया था।"

"बोलो।"

"माँ चाहती है कि मैं अब शादी कर लूँ। [illegible] कई लड़कियों के फ़ोटोग्राफ़ उन्होंने मेरे सामने रखे थे।"

"कोई पसंद आयी?" उन्होंने मुस्कुरा कर पूछा।

मैं थोड़ी देर चुप बैठा रहा फिर कहने लगा-

"पसंद नापसंद का तो प्रश्न ही नहीं उठता है न।"

"क्यों भला?" वह हँस दी।

"..... क्योंकि मेरे मन में शुरू से ही कोई और है।"

"कौन है?"

"आप हैं?"

मैंने उन्हें स्पष्ट बता दिया। माधुरी जी खामोश बैठी रहीं। मैंने फिर कहना शुरू किया-

"पहली बार आप से मिलने के बाद आज तक एक भी ऐसा दिन नहीं बीता जब मैंने आप को याद न किया हो। जिसे मैं बचपन से चाहता आया हूँ। उसे कैसे भूल सकता हूँ....."

"और तुम समझते हो कि मैं तुम्हें भूल गयी दीपक?"

अचानक माधुरी जी के भर्राये कंठ से मैंने यह स्वर सुना। उनकी आँखें भी छलछला उठी थीं।

"अरे पगले! तुम चार साल से यहाँ आये नहीं। मेरी आँखें तरस गयीं तुम्हें देखने के लिए दीपू। हर दीवाली और गर्मी की छुट्टियों में मैं तुम्हारी राह देखती थी दीपक। तुम्हारे बिना यह घर श्मशान जैसा लगता था मुझे। हर होली के समय मैं तुम्हें मिस करती हूँ दीपू।"

माधुरी जी सुबक-सुबक कर बोल रही थीं। बीच-बीच में अपनी साड़ी का आँचल अपनी भीगी आँखों की ओर ले जाती थीं मेरी इच्छा

हुई कि अपने बिस्तर से उठकर मैं उनके पास एक कुर्सी खींचकर बैठ जाऊँ। उनके हाथ अपने हाथों में ले लूँ। पर मैं ऐसा कर नहीं सका। उन्हें स्पर्श करना अब शिष्टता के विपरीत लगता था। हर्ष और विषाद का मिश्रित गंभीर मन लिये मैं अपने पलंग पर ही बैठा रहा। न जाने क्यों मेरे मन में यह विचार आया कि कहीं ऐसा तो नहीं कि मेरी प्रतीक्षा में ही अब तक माधुरी जी ने भी ब्याह नहीं किया हो।

वे बहुत देर तक रोती रहीं फिर शांत हो गयीं। अब उनके आँसू सूख चुके थे। शायद हम दोनों एक-दूसरे को अपने मन की बात बता कर अब काफी हल्का अनुभव कर रहे थे। माधुरी जी ने गंभीर और स्पष्ट स्वर में पुनः कहना शुरू किया। उनके एक - एक शब्द में जैसे जोर था, "तुमसे बढ़कर प्रिय व्यक्ति मेरे लिए कोई नही है दीपक।" माधुरी जी का एक-एक शब्द उनके नाम को सार्थक करता था। "लेकिन तुम अच्छी तरह से जानते हो कि मैं तुमसे उम्र मे तीन साल बड़ी हूँ।"

"माँ भी बिल्कुल यही बात कहती थी..." मैंने तत्काल ही कहा "लेकिन मैं आप लोगों से यह पूछता हूँ कि पत्नी का उम्र मे पति से बड़ा होना क्यों अनुचित है? क्यों अनर्थ है? आखिर क्यों है?"

माधुरी जी थोड़ी देर चुप बैठीं रहीं फिर उन्होंने कहा - "ये तो मैं नहीं जानती दीपक, लेकिन हमारे समाज में इसका प्रचलन नहीं है कि पत्नी अपने पति से उम्र में बड़ी हो।"

"प्रचलन नहीं है तो अब शुरू करना चाहिए। अपवाद तो खैर कई हैं" माधुरी जी चुपचाप बैठी रहीं।

"कई ऐसे सुखी दम्पति है जिनमे पत्नी उमर में बड़ी है।" मैंने अपने पक्ष में लगातार तर्क देना जारी कर दिया।

"विदेशों मे तो अब यह एक आमबात हो गयी है। अमेरिका में तो ऐसे हजारों नहीं बल्कि लाखों दम्पति हैं जिनमे पत्नी उम्र में बड़ी है। हमारे यहाँ भी कई उदाहरण हैं। नर्गिस अपने पति सुनील दत्त से उमर मे बड़ी थीं। उनके सुखी दाम्पत्य जीवन में किस बात की कमी थी? एक 'कपल' हमारे सर्जरी प्रोफेसर थे। उनमे पत्नी उमर में बड़ी थी। उनका बड़ा ही सुखी पारिवारिक जीवन लगता था। उनके तीन बच्चे थे। कस्तूरबा गांधी महात्मा गांधी से छः महीने बड़ी थीं। अंग्रेजी के सुप्रसिद्ध साहित्यकार 'एक्स्पत्ती' [illegible] शेक्सपीयर अपनी पत्नी ऐन

[illegible]

मैंने [illegible] माधुरी जी [illegible]

[illegible]

माधुरी जी [illegible]

"[illegible] बेकार की बात हुई न।" मैं [illegible] फिर कहा।

"मुझे तो लगता है [illegible] पुरुष प्रधान समाज ने [illegible] कम-से-कम अपना पत्नी पर [illegible]"

"तो अब तुम नारी-प्रधान समाज की स्थापना करना, चाहते हो," अचानक ही माधुरी जी का विनोदपूर्ण स्वर मैंने सुना।

जाहिर था कि हमारे बीच अब गम्भीरता के बादल छँट चुके थे।

"नारी-प्रधान या पुरुष-प्रधान जैसी कोई बात भी होनी ही नहीं चाहिए। शादी-ब्याह में यदि लड़के लड़कियों के बीच उम्र का बंधन न रहे तो इससे समाज को ही राहत मिलेगी। समाज में अच्छी शादियाँ लगने के 'स्कोप' और 'चान्सेज; बढ़ जायेंगे।" मैंने माधुरी जी से कहा।

वह चुपचाप बैठी रहीं।

"तो कल मैं ये खुशखबरी ले कर चला जाऊँ और जा कर माँ को बता दूँ कि आप ब्याह के लिए तैयार हैं।" मैंने उनसे पूछ कहा।

"अभी उनसे कुछ मत कहना।" माधुरी जी का स्वर मैंने सुना।

"क्यों नहीं?"

"दीपक, तुम अपना डाक का पता मेरे पास छोड़ जाव। मैं बहुत जल्दी ही पत्र लिखकर तुम्हें अपना निर्णय बताऊँगी।"

'कब तक?

[illegible]

'[illegible] आपसे पूछ सकता हूँ कि आप अपनी [illegible]'

'क्योंकि मैं एक औपचारिकता पूरी करना चाहती हूँ।'

'कैसी औपचारिकता?'

[illegible] मैं इस गाँव में पैदा हुई हूँ यहीं पली-बढ़ी हूँ। मेरी आज [illegible] यहाँ की परम्पराओं और गाँव के बड़े बुजुर्गों का [illegible] एक कर्तव्य बनता है। पहले मैं मंगल से राय लूँगी क्योंकि वह इस घर का नौकर ही नहीं, वह मेरे बचपन से मेरा गार्जियन भी है। फिर मैं मंगल के द्वारा गाँव के बड़े बुजुर्गों से इस रिश्ते के बारे में पुछवाऊँगी। फिर माधुरी जी ने थोड़ा रुक कर कहा।

"[illegible] तो सचमुच सारा गाँव मेरे ब्याह के लिए चितित है। यदि आज मेरे माता-पिता होते या अकेली दादी माँ भी होतीं तब शायद मुझे ये औपचारिकता पूरी करने की जरूरत न पड़ती।"

मैं माधुरी जी की भावनाओं की मन-ही-मन कद्र किये बिना न रह सका।

रात के ग्यारह बज चुके थे। माधुरी जी अपने बेडरूम में जाने के लिए उठ खड़ी हुईं। उनके साथ ही मैं भी अपने बिस्तर से उठा और कुछ कदम चलकर उन्हें 'गुड नाइट' कह आया।

लौट कर मैं अपने बिस्तर पर लेट गया। मुझे स्पष्ट आभास हो रहा था कि मतदान पेटी में मुझे भारी बहुमत मिल चुका है। देर है तो केवल मतगणना और मेरी विजय की घोषणा की।

दूसरे दिन सुबह मैं अपनी नौकरी पर केसकाल, बस्तर के लिए रवाना हो गया। यहाँ माँ भी मेरे साथ थी।

केसकाल आने के बाद पन्द्रह दिन बीतने को आ गये थे। हर रोज बड़ा ही बेसब्र हो कर मैं पोस्टमैन की राह देखता। पर लगता है प्रतीक्षा और पत्रागमन का आपस में बड़ा ही बैर है। पोस्टमैन आता भी तो इधर-उधर की डाक मुझे थमा कर चल देता। एक दो बार डाकिये से मैंने पूछा भी-

"रामधन मेरा कोई और लेटर तो नहीं है?"

"अगर लाना हो आजकल [illegible]

हालांकि मुस्कुरा [illegible]

मैंने माधुरी जी का अपना ठीक पता नहीं दिया [illegible] मगर लो नहीं कि मंगल या माधुरी जी के [illegible] तैयार नहीं हुए? माधुरी जी के अपने गाँव का [illegible] ध्यान भी तो है। [illegible] माधुरी जी के गाँव में लौटे अब तो मुझे इकत्तीस दिन [illegible] न आया और मेरी बेचैनी बढ़ती ही गयी।

आज बाइसवाँ दिन था। अपराह्न में [illegible] के बाद [illegible] घर के सामने मोटरसाइकिल खड़ी की। बरामदे में घुसने [illegible] मंगल पर जो यहाँ जमीन पर बैठा बीड़ी सुलगा रहा था। [illegible] शायद पी चुका था क्योंकि उसके निकट ही [illegible] था।

"अरे मंगल! तुम कब आये?" मैंने [illegible] उससे पूछा।

"अभी थोड़ा पहले आया हूँ, डॉक्टर बाबू।"

मंगल ने मुझे बताया और वह उठकर [illegible] खड़ा हो गया।

"अरे, बस रहने दो" मैंने मंगल के हाथ पकड़ लिये।

"यहाँ इधर बैठो।" मैंने स्वयं एक कुर्सी पर बैठते हुए मंगल को दूसरी कुर्सी पर बैठने का संकेत किया।

"नहीं बस ठीक है।" मंगल ने कहा और जमीन पर ही अपने पूर्ववत् स्थान पर ही वह पुनः बैठ गया।

"माँ! सुनो तो"

मैंने अंदर माँ को हाँक लगायी।

"शायद वे कहीं पड़ोस में अभी गयी हैं।"

मंगल ने ही मुझे बताया।

"अच्छा ... खोंगसरा में सब ठीक है?" मैंने मंगल से पूछा।

"हाँ, हाँ, सब ठीक है।"

"माधुरी जी कैसी है?"

'वह भी अच्छी है।

[illegible] प्रश्न संकट के भीतरी जेब से [illegible] लिफाफा निकाल कर मेरी ओर बढ़ाते हुए कहा-

"अच्छा [illegible] लिफाफा [illegible] आपका लिया।"

"अच्छा!" मैंने लिफाफा अपने हाथ में ले लिया।

पत्र पढ़ने के लिए मैं अधीर हो रहा था। पर तत्काल मंगल के सामने ही लिफाफा खोलना मुझे अशोभनीय सा लगा और वहाँ से उठकर जाना भी। अतः मैं वहाँ बैठा मंगल से बातचीत में ही लगा रहा।

"आपके आने के पीछे हमने गाँव के सरपंच और कई बड़े बुजुर्गों को अपने घर में बुलवाया था। कई औरतें भी थीं। सब मिलाकर पचास साठ लोग रहे होंगे।" मंगल मुझे बताने लगा।

"किसलिए?"

"नोनी ने सब की दावत की थी। फिर दावत के बाद एक मीटिंग हुई। पर मीटिंग में नोनी नहीं थीं वह ऊपर अपने कमरे में चली गयी थीं। मीटिंग में मैं ही अगुवा था। नोनी ने फैसला गाँव वालों पर ही छोड़ दिया था।"

"किस बात का फैसला?" मैंने जानबूझ कर किंतु व्यग्र हो कर पूछा।"

"उनकी यानी माधुरी बिटिया और आपके रिश्ते का।"

"अच्छा ... फिर?"

"मीटिंग में जितने भी लोग थे, सब ने यह रिश्ता मंजूर कर लिया।"

मंगल ने मेरी विजयघोष का शुभ-समाचार मुझे सुना दिया था। अब मेरे मन में माधुरी जी का पत्र पढ़ने की उतनी उत्सुकता न रही।

"किसी ने तो विरोध किया होगा।" मैंने मंगल को कुरेदा।

"हाँ, जगतराम पहले हाथ न उठाता था।"

मंगल हँसकर कहने लगा।

"क्या मतलब?"

"मैंने मीटिंग में सब कुछ बताने के बाद गाँव वालों से कहा कि माधुरी बिटिया और दीपक बाबू का रिश्ता जिसे मंजूर हो वह अपना

[illegible]

सब लोग ठहाका लगाकर हँस पड़े।'

मंगल की बातें सुनकर मैं भी मुस्कुरा उठा। तभी माँ [illegible] से पुलकित मन आती दिखीं। "बेटा, मैं सारे पड़ोस में तुम्हारे काम लग जाने की खबर दे आयी।" माँ बरामदे में आ कर मुझ से कहने लगी फिर मंगल से कहा - "मंगल भाई, माफ करना। घर आये मेहमान को अकेले छोड़कर मुझे नहीं जाना चाहिए था पर क्या करूँ 'हँसी, खाँसी, खुशी' ये न रुकती हैं न छुपती हैं।

माँ को मंगल के साथ मैं बरामदे में ही छोड़कर मुस्कुराता हुआ अपने कमरे में आ गया। कपड़े बदल कर मैंने माधुरी जी का लिफाफा खोला और उनका पत्र पढ़ने लगा।

"प्रिय दीपू

बहुत-बहुत प्यार।

मुझे पत्र लिखने में विलम्ब हुआ। इसके लिए माफी चाहती हूँ। दरअसल गाँव के सभी मुख्य लोगों को एक ही दिन एकत्रित करने में थोड़ा समय लग गया। मंगल से तुम्हें और माँ जी को सब

मिल जायगा। हाँ, तुम से एक निवेदन करती हूँ। मेरा गाँव और मेरा घर - अब तुम्हारा ससुराल होने जा रहा है। अब यहाँ ब्याह के पहले मत आना। प्लीज।

माँ जी को मेरा प्रणाम कहना।

तुम्हारी ही
'माधुरी'



मंगल दूसरे दिन ही वापस खोंगसरा लौट आया। वह हमें कह गया था कि महीने भर के भीतर ही वे लोग शादी का मुहूरत निकलवा रहे हैं। फलदान सीधे वे लोग हमारे गाँव ही भेजेंगे।

माँ को भी अब हमारे गाँव नवापारा पहुँचने की चटपटी थी क्योंकि मेरा मंडपाच्छादन वहीं होना था और बारात भी वहीं से निकलनी थी। कुछ ही दिनों में मैं माँ को पहुंचाने गाँव चला गया। लौटकर बस्तर की तरफ आने लगा तो बिलासपुर रेलवे स्टेशन पर एक पुराने मित्र मिल गये। हम हाई स्कूल साथ ही पढ़े थे। चर्चा के दौरान उन्होंने बताया कि उनके पिता जी बीमार हैं। यदि मुझे तकलीफ न हो तो उनके गाँव खोड़ी चलकर देख लूँ। मित्र से कुछ ऐसे संबंध थे कि टाल मटोल या इनकार की गुंजाइश न बनती थी। थोड़ी ही देर में वह खोड़ी के लिए रेल की दो टिकटें भी खरीद लाये। अंततः मित्र के साथ मुझे उनके यहाँ जाना ही पड़ा।

बिलासपुर - इन्दौर लाइन पर खोड़ी से आगे ठीक पहला स्टेशन खोंगसरा है - माधुरी जी का गाँव, जो वहाँ से कुछ ही मिनटों का रास्ता है ।

मित्र के पिता को देखकर और उनके लिए कुछ दवाइयाँ लिखकर मैं लौटा। मन पर बहुत नियंत्रण पाने की कोशिश की लेकिन इतने नजदीक आ कर माधुरी जी से मिल आने का लोभ आखिर मैं संवरण न कर सका।

दोपहर जब मैं माधुरी जी के घर पहुँचा तो वहाँ आँगन में कई महिला - मजदूरियाँ काम में लगी थीं। ढेर सारे कच्चे आम आँगन में फैले हुए थे। कोई उन्हें धो रही थी, कोई काट रही थी, कोई आचार

के लिए, सामान्य कुछ नहीं थी। कुछ पत्थर केवल [illegible] था, जो कुछ नहीं - किसी [illegible] में साफ पता चलता था कि घर में निकट भविष्य में होने वाली शादी की तैयारियाँ चल रही हैं। और मैं भी उसी का निरीक्षण करने के लिए यहाँ आ गया हूँ। यहाँ आज सिर्फ कूटने की वजह से आँगन में पहुँचते ही मुझे छींक आ गयी। और सारी महिलाओं का ध्यान मुझ पर केन्द्रित हो गया। बेचारी कुछ शरमाई भी। [illegible] में [illegible] रहा था।

"बाबू पाय लागों," "प्रणाम दीपक बाबू" महिलाएँ आगे-आगे से मेरा अभिवादन करने लगीं। एक-दो महिलाएँ मेरे पैर छूने के लिए भी आगे बढ़ आयीं।

तभी मंगल और माधुरी जी ऊपर से सीढ़ियाँ उतरते हुए मुझे दिखे। मंगल आगे-आगे और माधुरी जी उसके पीछे-पीछे। काफी मामूली वेष के बावजूद - सूट में उसका रंग-रूप और भी निखर आया था। एकदम नवयौवना लग रही थीं। और अपने कालेज के दिनों की याद दिलाती थीं। मंगल के हाथ में दो - तीन बड़े - बड़े झोले नायलॉन के थे और दूसरे हाथ में रुपयों की गड्डियाँ व शादी के कार्डों का एक बड़ा सा बंडल। साफ जाहिर होता था कि वह इन्हें पोस्ट करने के बाद कहीं खरीददारी के लिए निकल रहा है।

माधुरी जी की मुझ पर नजर पड़ते ही उल्टे पाँव सीढ़ियाँ चढ़ते हुए ऊपर भाग गयीं। यह वह माधुरी जी थीं जो कभी मुझे देख कर दौड़ी चली आती थीं।

"अरे ! दीपक बाबू, आप कब आये?" मंगल ने मुझे देखते ही हँसकर पूछा।

"मैं कुछ काम से यहीं आया था। सोचा, तुम लोगों से भी मिलता चलूँ।"

मैंने मंगल से कहा।

"बहुत अच्छा किया।" मंगल ने कहा।

"जाइये ऊपर चले जायें। मोनी "

तब माधुरी जी को [illegible] समाने लगा फिर मेरी ओर देखकर

"अच्छा .. " मैंने कहा।

मंगल चला गया।

मैं 'हिम्मत' करके ऊपर पहुँचा। ऊपर बरामदे मे टेबल पर ढेर सारे शादी के कार्ड और लिफाफे बिखरे पड़े थे। वहाँ कई तरह के स्वर्णाभूषण के सेट भी इधर - उधर फैले हुए थे। लगता था कोई थोड़ी देर पहले ही इन्हें जाँच परख रहा था।

मै ऊपर पहुँच कर चुपचाप खड़ा हो गया। माधुरी जी के पत्र की बात 'यहाँ ब्याह से पहले मत आना' मुझे बार - बार साल रही थी। 'नाहक ही आ फँसे' मैं पछता रहा था कि माधुरी जी तूफान सी अपने कमरे से निकल कर मेरे सामने खड़ी हो गयी।

"मैंने तुम्हें यहाँ आने के लिए मना किया था न?"

माधुरी जी मुझ पर झपट ही पड़ीं।

"जी ..... दरअसल मैं खोड़ी आया था। एक पेशेंट देखने ......"

"तो वहीं से लौट जाते।" वह आवेश में ही थीं।

"जी .... मैंने सोचा कि जब इतने नजदीक आ ही गया हूँ तो यहाँ आ कर आपके हाथों के लंच खा लूँ। ..... नाराज न हो। मै अभी तीन बजे की पैसेंजर से वापस चला जाऊँगा। मैं तो यूँ ही आ गया था।" मैंने उन्हें सफाई देने की कोशिश की।

"यूँ ही आ गया था।" उन्होंने हाथ मटका कर मेरी नकल की और हँस दीं।

अब मेरी जान मे जान आयी। फिर उन्होंने मेरा ब्रीफकेस अपने हाथों में लेते हुए पूछा -

"नहाना है?"

'हाँ, मैं नहाऊँगा।"

"तो जाओ जल्दी करो, मैं खाना लगाती हूँ।"

मैं माधुरी जी के साथ डायनिंग टेबल पर लंच खाने बैठा तो उन्होंने मुस्कुरा कर पुनः कटाक्ष किया- "धिक् धिक् ऐसे प्रेम को ....."

"मैं भी तुलसीदास जी की तरह कहीं निकल जाऊँगा। फिर आपको भी पछताना पड़ेगा।" मैंने भी मुस्कुरा कर व्यंग्य का जवाब दिया।

अब वह उन्मुक्त हो कर हँस पड़ी फिर भोजन के दौरान उन्होंने

गंभीरता से कहा -

"अब जब आ ही गये हो तो आज रुको। कल सुबह चले जाना।" मेरे मन की बात माधुरी जी ने स्वयं ही कह दी थी।

रात हम काफी देर तक गप्पें मारते रहे। मैं नाइटसूट पर बिस्तर पर बैठा हुआ था और माधुरी जी हमेशा की तरह अपनें इजीचेयर पर थीं। पहाड़ी स्थान होने की वजह से मार्च के आखीर में भी यहाँ ठंड थी। अतः हम दोनों शाल ओढ़े हुए थे।

"केसकाल पहुँच कर आपको बड़ा अच्छा लगेगा। बड़ी सुंदर जगह है।" मैं माधुरी जी से कह रहा था।

"एक तरह से वह तो छत्तीसगढ़ का काश्मीर ही है।" मैं ही बोलता जा रहा था - "और फिर बंगला तो एक बड़ी ही सुंदर पहाड़ी के ऊपर है। और जानती हैं उस घर का नाम क्या है?"

"क्या है?" माधुरी जी ने पूछा।

"कहीं आपको ऐसा न लगे कि मैं जानबूझ कर गलत बता रहा हूँ?"

"क्या है भाई?" उन्होंने कुरेदा।

"हनीमून काटेज"

माधुरी जी मुस्कुरा दीं।

"इस नाम के पीछे 'हिस्ट्री' यह है कि काफी बरसों पहले के अंग्रेज नवदंपत्ति उस नये बंगले में अपना हनीमून मनाने गये थे। बाद में बंगला मध्य प्रदेश के स्वास्थ्य विभाग ने हथिया लिया और उसे डाक्टर का निवास स्थान बना दिया। वैसे अब लोग उसे डाक्टर बंगला भी कहते हैं।"

"माधुरी जी चुप बैठी मेरी बातें सुन रही थीं।

"माँ बहुत खुश हैं ......" थोड़ी देर बाद मैंने कहना शुरू किया, "एक-एक दिन गिन रही हैं कब उनकी बहू उनके घर आये ...."

"मैं एक सची बात बताऊँ दीपक ......" अचानक माधुरी जी के स्वर मैंने सुना।

"जी"

"एक-एक दिन तो मैं गिन रही हूँ दीपू, कि कब मैं माँ जी के

धाम पहुँचूँ। माँ बाप भाई-बहिन इन सब रिश्तों के लिए मैं तरस गयी दीपक। कोई भी तो नहीं है मेरा।

थोड़ा रुक कर माधुरी जी ने फिर कहा -

"दादी माँ के इंतकाल के बाद तो यह घर सचमुच मुझे काटने को दौड़ता था। पहले तुम छुट्टियों में यहाँ आ जाते थे तो कुछ दिन तुम्हारे साथ बड़े ही मजे से कट जाते। पर पिछले चार - पाँच सालों से तुमने भी यहाँ आना ही छोड़ दिया था। मैं तो एकदम अकेली पड़ गयी थी दीपू।"

"अच्छा इन सब बातों को मारिये गोली।"

"मैंने उन्हें भावुक होते देख बात का रुख पलटने की कोशिश की।

"......... अच्छा यह बताइये। आज दोपहर जब मैं यहाँ आया तो आप मुझे देखते ही ऊपर क्यों भाग आयीं? क्या मुझ से शरमा कर?"

मैंने माधुरी से विनोद के स्वर में पूछा।

"मैं तुमसे क्यों शरमाने लगी?" माधुरी जी ने भी मुस्करा कर कहा।

"तो फिर आप मुझे देखते ही भागी क्यों?"

"अरे बाबा मैं तुम से डरती हूँ कि कहीं सब के सामने तुम मुझे प्रणाम न कर बैठो। तुम्हारी आदत जो है।"

"तो क्या हुआ? आप बड़ी हैं। मुझे तो आपको 'प्रणाम' करने में कोई 'एम्बरेसिंग फील' नहीं होता।"

"लेकिन अब मुझे होता है। आइन्दा तुम मुझे प्रमाण-वणाम मत करना।" माधुरी जी ने मुझे चंचलता से डाँटा।

"हमारे घर में तो यही सिखाया गया है कि जो बड़ा हो, जिसके लिए मन में श्रद्धा हो उसे प्रणाम करना चाहिए" मैंने उनसे अभिनय की मुद्रा में कहा।

"इतनी ही श्रद्धा है तो दूर से नमस्ते कर लिया करो।" उन्होंने हँस कर कहा।

"जैसा आपका आदेश, जैसी आपकी मर्जी।"

मैंने उनका आदाब बजाते हुए कहा।

रात के ग्यारह बजने को आ गये थे। सुबह साढे सात बजे मुझे

कलिंग एक्सप्रेस लेना था। माधुरी जी अपने बेडरूम में जाने के लिए उठ खड़ी हुई।

"दीपक अब तुम सो जाओ, सुबह तुम्हें जल्दी उठना है।"

उन्होंने मुझसे कहा।

"आप मुझे छः बजे जगा देंगी।"

मुझे मालूम था कि माधुरी जी तड़के ही उठकर नहा लेती हैं और कृष्ण जी की पूजा भी कर लेती हैं।

"ठीक है।" उन्होंने मुझ से कहा और वे अपने कमरे में चली गई।

सुबह जब मेरी आँख खुली तो माधुरी जी ठीक मेरे कान के ऊपर, एक खाली कप-प्लेट 'टिकिर-टिकिर' बजा रही थीं। मुस्कुराती हुई। स्नान-ध्यान के बाद ही वह मुझे जगाने आयी थीं क्यों कि एकदम 'फ्रेश' लग रही थीं। मैं अपने बिस्तर पर उठकर बैठ गया।

"शुभ प्रातः।" माधुरी जी ने हँस कर कहा। और मुझे लगा कि सचमुच आज का मेरा सारा दिन शुभ हो गया।

"जाओ ब्रश कर आओ। मैं चाय ला रही हूँ।" उन्होंने पुनः मुझसे कहा और नीचे चली गयीं।

'श्री रामचन्द्र कृपालु भजमन'..... गुनगुनाती हुई।

मैं बाथरूम से सीधे नहा धो कर लौटा और जाने के लिए तैयार हो गया। चाय के बाद मुझे विदा करने माधुरी जी छत पर निकल आयीं। पूरब की ओर से किरणें फूटने को ही थीं। मैंने छत पर से घर की ओर नीचे झाँका। अभी तक घर में कोई नौकर-चाकर नहीं आया था। जब मैं पूरी तरह के आश्वस्त हो गया कि घर में हम दोनों के सिवाय कोई नहीं है तो मुझे एक चुहल सूझी। रात में माधुरी जी के साथ गप्पों के दौरान थोड़ा 'फ्रैंक' भी हो गया था।

"माधुरी जी" मैंने धीरे से कहा।

"हाँ"

एक छोटा सा 'रिक्वेस्ट करूँ?"

"क्या है?"

"अब तो पन्द्रह दिनों में हमारा ब्याह होने वाला है। जाते जाते मुझे 'एडवांस' में माथे पर एक छोटा सा चुम्बन दे दीजिए ना।" मैंने

अपने दाहिने गाल व एक कान पर अपनी एक उँगली रखते हुए कहा।

"छोटे बच्चे हो?" माधुरी जी ने हँस कर पूछा। "चलिए, छोटा सा बच्चा समझ कर ही दे दीजिए।"

"चुंबन नहीं, चपत लगाऊँगी मैं तुम्हें यहाँ।" उन्होंने मुस्कुरा कर मुझे अपनी हथेली दिखायी।

ज्यादा मिन्नतें करना बेकार था

"अच्छा फिर, नमस्ते," मैंने हँस कर उनके सामने अपने दोनों हाथ जोड़ दिये।

"नमस्ते," माधुरी जी भी हँस दीं।

"हाँ बस इसी तरह से नमस्कार करना चाहिए, दूर से।" उन्होंने हँसते हुए ही कहा।

मैं मुस्कुराता हुआ छत पर से सीढ़ियाँ उतरने के लिए आगे बढ़ गया।

"दीपू" तभी पीछे से माधुरी जी की आवाज मैंने सुनी।

"जी" मैं उनकी ओर पलटा।

वह छत के दूसरे छोर पर खड़ी मेरी ओर देखती हुई मुस्कुरा रही थीं। अपने गले में पड़े कृष्ण भगवान् के चित्र वाले सोने की लाकेट से खेलती हुईं। गुलाबी रंग की नक्काशी की हुई सुंदर सी साड़ी ब्लाउज में वह स्वयं भी बेहद सुंदर लग रही थीं। जिस पर पूरब की ओर से फूटती हुई सुनहरी किरणें उनकी शोभा को और भी कई गुना बढ़ा रही थीं।

अचानक माधुरी जी किसी एथलीट की भाँति मेरी ओर दौड़ीं और आकर उन्होंने मुझे अपने आलिंगन में भर लिया।







आदित्य नारायण शुक्ल 'विन

जन्म : 25 अप्रैल सन् 1950 को ग्राम जिला—बिलासपुर, मध्य प्रदेश में विद्यासागर, बिलासपुर, मध्य निवासी। मध्य प्रदेश के छत्ती ग्राम नवापारा (गनियारी के खंड—तखतपुर, जिला—बिलास बीता।

शिक्षा : एम० ए० (राजनीति विज्ञान व छत्तीसगढ़ उच्चतर माध्यमिक श जिला—बिलासपुर, म० प्र० में व्याख्याता के रूप में अध्यापन। से स्थायी रूप से अमेरिका (यू० निवास।

प्रकाशन : अक्टूबर 1975 में पहली कहानी क्षुधा' मुक्ता में। हिन्दी के प्रायः पत्र-पत्रिकाओं में विभिन्न र 'कादम्बिनी' में प्रकाशित कहानी प्रेमिका' पाठकों द्वारा विशेष रूप

संप्रति : सेन फ्रांसिस्को, केलिफोर्निया की नौकरीरत व स्वतंत्र लेखन।

संपर्क : 1735-A सैंपलिंग कोर्ट
कानकार्ड, केलिफोर्निया 94519
यू० एस० ए०